चन्दामामा
जून १९८७

डायमंड कामिक्स
पेश करते है—नई
कॉमिक्स डाइजेस्ट
रामायण
चाचा चौधरी
पंचतंत्र
लम्बू मोटू
चाचा भतीजा
फौलादी सिंह
मोटू पतलू
महाबली शाका
मूल्य प्रत्येक 12/-
128 पृष्ठों में मनोरंजन ही मनोरंजन
रहस्य रोमांच व साहसिक कारनामों से भरपूर
नई वाल पाकेट बुक्स (जून सैट)
चाचा चौधरी और आंतकवादी 3.00
राजन इकबाल और जिंदा मुर्दे 3.00
फौलादी सिंह और चुनौती का बदला 3.00
लम्बू मोटू और लापता विमान 3.00
ताऊ जी और सुनहरी बिल्ली 3.00
अण्डेराम डण्डेराम और करामाती सितारे 3.00
चाचा भतीजा और जादू की छतरी 3.00
मोटू छोटू और ड्रग्स किंग 3.00
नये डायमंड कॉमिक्स
बिल्लू होस्टल में 5.00
अंकुर और लपटू झपटू 5.00
पलटू और लाजवाब कुत्ता 5.00
पिकलू और भेड़ियों का आंतक 5.00
चाचा भतीजा और पानी का दैत्य 5.00
दब्बू जी और दांतों के डाक्टर 5.00
आलतूराम फालतूराम और सुपर स्टार 5.00
छोटू लम्बू और जंबू 5.00
चाचा चौधरी और हीरो की खेती
अगले माह पढ़े यह नये डायमंड कॉमिक्स
डायमंड कामिक्स प्रा. लि. 2715, दरियागंज, नई दिल्ली-110002

लिओ के लाड़ले हीरो
मौज मनाएं सबसे बढ़कर...
देख लो लिओ लेकर!
LEO
ऑटो रायफ़ल
५ से १२ वर्ष तक
बड़ी बंदूक, बड़ा निशाना...
बहादुरी से लड़ते जाना!
कैरी-ऑन शेफ़
५ वर्ष से अधिक
शेफ़ को सही राह दिखाओ
केक के ऊपर केक जमा करो, और विजयी बनो!
ले-एन-एग
७ वर्ष से अधिक
बैटरी से चले. बटन दबाओ, जल्दी-जल्दी
ज़्यादा अंडे पकड़ो!
बीच क्राफ़्ट
२ से ५ वर्ष तक
ज़मीन पर रगड़ो, छोड़ो.
ये चले तो इंजन भी हिले-डुले!
पायलट आप बनें!
डेयर डेविल
२ से ५ वर्ष तक
ज़मीन पर रगड़ो, छोड़ो
और फ़ायर इंजन दौड़ाओ. बहादुरी से
आग बुझाओ!
रेसिंग रोवर
३ वर्ष से अधिक
दो हिस्सों को अलग-अलग खींचो,
जीप में शक्ति भरो, और छोड़ो.
चलो अब दूर-दूर की सैर करो!
फ़ॉल्कन
३ वर्ष से अधिक
पीछे खींचकर छोड़ो.तेज़ी से आगे बढ़े.
नयी-नयी दुनिया में आप उड़ें!
लैण्ड क्रूज़र
३ वर्ष से अधिक
बैटरी से चलने वाली जीप
मोबाइल कार
३ वर्ष से अधिक

आओ
अंकल लिओ क्लब के सदस्य बनो!
UNCLE LEO CLUB
Come join the fun!
कोई भी लिओ खिलौना खरीदकर, आप भी अंकल लिओ क्लब के सदस्य बन सकते हैं. जल्दी कीजिए, क्योंकि पहले २५,००० बच्चों के लिए एक साल की सदस्यता बिल्कुल मुफ़्त है!
शूट-आउट-गन
५ वर्ष से अधिक
निशाना लगते ही मज़बूती से चिपके, आपको साफ़-साफ़ दिखे!
फ़्लाइंग डिस्क
६ वर्ष से अधिक
फ़्लाइंग डिस्क उड़ाओ, चांद सितारों से आगे बढ़ाओ!
मॉज़र पिस्टल
८ वर्ष से अधिक
मशहूर मॉज़र पिस्टल का हूबहू नन्हा रूप!
मेल वैन
३ से ९ वर्ष तक
दोस्तों को लिखो चिट्ठी-खत, मेल वैन में पहुंचाओ फटाफट!
ऑटो पिस्टल
४ से १० वर्ष तक
गोली चलने की दनादन आवाज़, ऊपर उठाओ, निशाना लगाओ... दुश्मन को मार गिराओ!
बुल्स आय
७ वर्ष से अधिक
निशाना लगाओ, गोली चलाओ, निशानेबाजी के कमाल दिखाओ!
फ़ाइटर जैट
३ वर्ष से अधिक
पीछे खींचकर छोड़ो, तेज़ी से बढ़े, हर लड़ाई शान से लड़े!
मार्टिनी पोर्श
३ वर्ष से अधिक
बैटरी से चलने वाली स्पोर्ट्स कार, छूते ही ये घूमे-मुड़े, देखो कैसी सरपट दौड़े!
फ़्लाइंग सॉसर गन
५ वर्ष से अधिक
नन्ही उड़न तश्तरियां उड़ाए, अंतरिक्ष में ले जाए, तुम्हें स्टार वॉर्स हीरो बनाए!
स्लाइड राइड
४ वर्ष से अधिक
बैटरी से चलने वाला रोलर कोस्टर, तेज़ रफ़्तार... गोल-गोल, ऊपर-नीचे भागती कार!
छुक-छुक ट्रेन
३ वर्ष से अधिक
बैटरी से चलने वाला ट्रेन सेट.
LEO TOYS
LINTAS LEO P1 2032 HI

आपको याद हैं वो कहानियां, जो आपकी मां आपको सुनाया करती थीं? वो कहानियां कि कैसे पुराने ज़माने में औरतों को अपने उन पांच दिनों में घर के अंदर ही बंद रहना पड़ता था और कैसे उन्हें उन पुराने धुराने घरेलू नैपकिनों पर निर्भर करना पड़ता था. लेकिन आज तो ये सभी बातें सचमुच कहानी होकर रह गई हैं. अगर आज की औरत के पास सही सैनिटरी सुरक्षा है–जैसे केयरफ़्री–तो वह कुछ भी कर सकती है. लेकिन क्यों केयरफ़्री?

क्योंकि ज़माना बदल रहा है और साथ ही आप भी. आज आप जिस दुनिया में रह रही हैं वो उस दुनिया से बिल्कुल अलग है, जिसमें आपकी मां रहा करती थीं. आज आप अपने उन पांच दिनों में भी हाथ पर हाथ रखे घर में बंद पड़े रहने की तो कल्पना भी नहीं कर सकतीं.

इसीलिए सही सैनिटरी सुरक्षा इतने महत्व की चीज़ हो जाती है.

आज के बदलते ज़माने में केयरफ़्री क्यों एक आदर्श चुनाव है?

क्योंकि केयरफ़्री बहुत स्वच्छ, साफ है और आपको पूरी सुरक्षा देती है. केयरफ़्री में बहुत अच्छी तरह सोखने वाली तहें हैं, ताकि आप सदा सूखी और आरामदेह महसूस करती रहें. और तेज़ बहाव के दिनों के लिए केयरफ़्री एक्स्ट्रा लार्ज है. अधिक लंबी, अधिक चौड़ी और अधिक मोटी नैपकिन एक्स्ट्रा लार्ज आपको अतिरिक्त सुरक्षा देती है आप जब भी चाहें.

केयरफ़्री में मौजूद तीन-तरफ़ा प्लस्टिक शील्ड इस बात का विश्वास दिलाती है कि कहीं से बहाव बाहर निकलने या दाग धब्बे लगने की कोई गुंजाइश नहीं. इसलिए परेशानी में डालने वाली 'दुर्घटनाओं' को अलविदा... हमेशा के लिए! इसीलिए तो केयरफ़्री के रहते वे पांच दिन की महीने के किसी और दिन की तरह लगते हैं. इसलिए अगर आप अब भी साधारण नैपकिन इस्तेमाल कर रही हैं तो अब वक्त आ गया है कि आप केयरफ़्री अपनाएं! आखिरकार... जब ज़माना बदल रहा है तो आप क्यों न बदलें!

केयरफ़्री सैनिटरी नैपकिन – आज के बदलते ज़माने में पूरा आराम, पूरी सुरक्षा.

१० के पैक और किफ़ायती २० और ३० के पैकों में मिलती है.

केयरफ़्री, क्योंकि ज़माना बदल रहा है और ज़माने के साथ आप भी

जॉन्सन एण्ड जॉन्सन

JBM/9074/HN

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

मनुष्य के अन्दर अभिरुचि के साथ-साथ यदि दृढ़ निश्चय भी रहे तो वह किसी भी विद्या को सरलता से प्राप्त कर सकता है। पर कभी मनुष्य एक विद्या में प्रवीण होकर अन्य विद्याओं में साधारण ज्ञान भी नहीं रखता। 'मूल्यांकन' शीर्षक कहानी का पात्र गोपीनाथ किसी विशेष विद्या में कुशल न होने पर भी व्यक्ति के चारित्रिक गुण-दोषों को परखने में अद्भुत प्रतिभा रखता है। पढ़िये इस कहानी में।

अमर वाणी

यः समुत्पतितं क्रोधं, क्षमयैव निरस्यति।
यथोरगस्त्वचं जीर्णं, स वै पुरुष उच्यते॥

[पुरानी केंचुली को सर्प जिस प्रकार आसानी से त्याग देता है, उसी प्रकार उत्पन्न हुए क्रोध को क्षमा द्वारा निरस्त कर देना चाहिए। ऐसा करने में समर्थ मनुष्य ही पुरुष है।]

वर्ष : ३९ जून १९८७ अंक : १०

एक प्रति : २-५० :: वार्षिक चन्दा : ३०-००

CHITRA

खाया जाये.
करारा 'विधि.

"पहले मैं पिकविक अलग-अलग करके बीच की सारी क्रीम चाट लेती हूं. फिर मज़े से करारे वेफ़र्स खाती हूं. बाद में मम्मी से और मांगने जाती हूं."

पिकविक क्रीमी वेफ़र्स

मज़ेदार, कुरकुरे...
मीठी-मीठी क्रीम भरे.

Contract-PW/1/87/Hn

महर्षि भृगु

प्राचीन काल में एक बार मुनियों के मन में यह संदेह पैदा हुआ कि ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर इन त्रिमूर्तियों में सत्वगुण प्रधान कौन है ? सब मुनि मिलकर ब्रह्मा के मानस-पुत्र महर्षि भृगु के पास गये और अपना संदेह प्रकट किया। मुनियों का संदेह-निवारण करने के विचार से महर्षि भृगु ने त्रिमूर्तियों का दर्शन करना उचित समझा।

महर्षि भृगु सर्वप्रथम ब्रह्मलोक में गये। वहाँ सरस्वती वीणा-वादन कर रही थी। उस समय ब्रह्मा सृष्टि के कार्य में निमग्न थे। वे भृगु का आगमन न जान पाये। भृगु ने क्रुद्ध होकर ब्रह्मा को शाप दिया और कैलास गये। वहाँ शिव-पार्वती लास्य नृत्य कर रहे थे। उन्होंने भी भृगु के आगमन पर ध्यान नहीं दिया। महर्षि भृगु ने शिव को भी शाप दिया और वैकुंठ में पहुँचे।

भगवान विष्णु शेष-शैय्या पर शयन कर योग-निद्रा में निमग्न थे। अपने भक्त के आगमन का विचार न कर भगवान विष्णु सो रहे हैं, यह सोचकर महर्षि भृगु कुपित हो उठे और उन्होंने विष्णु के वक्षस्थल पर लात मारी।

दूसरे ही क्षण विष्णु जाग उठे। उन्होंने भृगु के चरण पकड़ लिये और उन्हे दबाते हुए पूछा, "महर्षि,मेरे कठिन वक्ष के स्पर्श से कहीं आपके कोमल चरण को कष्ट तो नहीं पहुँचा है?"

महर्षि भृगु अपनी असहिष्णुता और अधीरता पर लज्जित हो उठे। उन्होंने भगवान विष्णु से क्षमा माँगी।

भगवान विष्णु ने भृगु को वर दिया, "महर्षि, आपके चरण-चिन्ह के रूप में सदा मेरे वक्ष पर श्रीवत्स रहेगा।"

यह भक्त के प्रति भगवान की असीम अनुकंपा थी।

इसके बाद महर्षि भृगु परम आनन्दित होकर जिज्ञासु मुनियों के पास पहुँचे और उनसे कहा, "मुनिजनो, त्रिमूर्ति देवों में भगवान विष्णु ही सत्वगुण प्रधान हैं। वास्तव में, वे भक्तों के लिए कल्पवृक्ष के तुल्य हैं।"

मूल्यांकन

विलासपुर नगर में उमाशंकर नाम के एक महान कवि रहते थे। उन्होंने अपनी कविता का उपयोग कभी धन-अर्जन के लिए नहीं किया था। उमाशंकर की पत्नी पार्वती भी बड़ी सुशील स्त्री थी। उसने पैसे के लिए कभी अपने पति को परेशान नहीं किया। वह बड़ी मितव्ययिता से गृहस्थी चलाती थी।

उमाशंकर के दो पुत्र थे रामनाथ और गोपीनाथ, तथा दो पुत्रियां थीं लक्ष्मी और रमा। रामनाथ अपनी शिक्षा समाप्त करने के बाद नगर के मुख्य न्यायाधीश के सलाहकार के पद पर काम करने लगा था। लक्ष्मी और रमा का विवाह हो चुका था। लक्ष्मी का पति मोहनदत्त तथा रमा का पति केशव उसी शहर के अच्छे व्यापारियों में थे।

सबसे छोटे पुत्र गोपीनाथ ने भी अपनी उच्च शिक्षा समाप्त कर ली थी। पर उसमें एक कमी थी, वह समझदार तो था, पर किसी विशेष विद्या में कुशल नहीं था। इसीकारण उसे अभी तक कोई नौकरी नहीं मिल सकी थी।

पर एक दिन सुयोग आ उपस्थित हुआ। महाराज कर्णसिंह की राजसभा में दो नर्तकियों की कला का प्रदर्शन हुआ। इन दोनों में कौन सी नर्तकी नृत्यकला में अधिक निपुण है, यह निर्णय करना कठिन होगया। राजा के असमंजस को देखकर जनता के बीच से गोपीनाथ आगे बढ़ा। उसने राजा को प्रणाम करके निवेदन किया, "महाराज, नर्तकियों की निपुणता का निर्णय होता रहेगा। आप उन्हें उचित पुरस्कार देकर सम्मानित कीजिए। श्रेष्ठता के निर्णय से कलाकार का सम्मान होता है, जबकि पुरस्कार से कला मात्र के प्रति सम्मान प्रकट होता है।"

गोपीनाथ के कहने का तात्पर्य इतना ही था कि कला के सम्मान में विलम्ब नहीं होना चाहिए।

गोपाल शर्मा

इतना कर सकता हूँ कि उनके गुण-दोषों का परिशीलन कर सकूँ ।"

राजा ने गोपीनाथ की बात स्वीकार कर उसे एक सभासद के रूप में अपनी सभा में रख लिया। कुछ ही समय में गोपीनाथ को यह सुयश प्राप्त होगया कि वह गुण-दोषों का विवेचन करने में विलक्षण रूप से कुशल है। अब यह गोपीनाथ की आदत-सी होगयी थी कि वह जहाँ भी रहता, लोगों के चरित्र का अध्ययन करता रहता ।

एक बार गोपीनाथ सब्ज़ी मंडी से गुज़र रहा था । उसने देखा कि एक सब्ज़ीवाला अधिक दाम पर और दूसरा कम दाम पर बैंगन बेच रहे हैं। एक ही तरकारी के दो भाव देखकर गोपीनाथ के साथी सुरेश ने उससे पूछा, "गोपीनाथ, इन दोनों सब्ज़ीवालों में से तुम किसका समर्थन करोगे ?"

"जो कम दाम पर अपनी तरकारी बेच रहा है, मैं तो उसी का समर्थन करूँगा ।" गोपीनाथ ने तुरन्त बेझिझक उत्तर दिया ।

"क्या तुम्हें मालूम है कि उसके बैंगन तीन चौथाई सड़ेगले हैं । वह जो अधिक दाम पर बैंगन बेचनेवाला दूसरा व्यापारी है, ख़रीदार को उसके बैंगन ख़रीदने पर विशेष फ़ायदा है, क्योंकि उसके सारे बैंगन अच्छे हैं ।" सुरेश ने कहा ।

"यह बात तो सही है, पर हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि दोनों व्यापारियों का उद्देश्य एक है—वह है किसी भी प्रकार से अधिक धन कमाना। जनता हमेशा सस्ती चीज़ की ओर

राजा कर्णसिंह को गोपीनाथ का परामर्श बड़ा अच्छा लगा । उन्होंने दोनों नर्तकियों को श्रेष्ठ पुरस्कारों से सम्मानित किया और उनकी कला की श्रेष्ठता का निर्णय कुशल विद्वानों पर छोड़ दिया।

इसके बाद राजा ने गोपीनाथ को बुलाकर कहा, "गोपीनाथ, मुझे तुम्हारे परामर्श में प्रशंसनीय विवेकशीलता के दर्शन हुए। मुझे ऐसे अनेक निर्णयों के लिए एक निजी सलाहकार की आवश्यकता है। मैं चाहता हूँ तुम यह पद संभाल लो ।"

गोपीनाथ ने विनयपूर्वक निवेदन किया, "महाराज, आपका सलाहकार बनने के लिए मुझमें पर्याप्त अनुभव नहीं है। आपकी सभा में अनेक अनुभवी और समर्थ सलाहकार हैं, मैं मात्र

आकर्षित होती है, यह बात पहले व्यापारी को मालूम है। इस बात को समझकर जो कम मूल्य में अपनी तरकारी बेच रहा है, वही अधिक लाभ कमायेगा।'' गोपीनाथ ने कहा।

गोपीनाथ के दोस्त सुरेश ने न केवल उसकी प्रशंसा की, बल्कि यह बात गोपीनाथ के घर में बताकर कहा, ''गोपीनाथ किसी भी बात के बारे में अपनी जानकारी देने में बेजोड़ है। उससे जब भी कुछ पूछो, वह अपना निर्णय बड़ा साफ़ और बेझिझक देता है। मूल्यांकन की उसके अन्दर अद्भुत क्षमता है।''

जब सुरेश गोपीनाथ के बारे में अपनी सम्मति प्रकट कर रहा था, उस समय उमाशंकर के घर में परिवार के सभी सदस्य उपस्थित थे। लक्ष्मी और रमा भी आयी हुई थीं। उनके पति मोहनदत्त और केशव भी वहीं बैठे हुए थे। बड़ा भाई रामनाथ तो था ही।

सबसे पहले रमा ने गोपीनाथ से प्रश्न किया, ''गोपी, तुम सब लोगों की योग्यता और क्षमता का मूल्यांकन करने में बहुत ख्याति प्राप्त कर चुके हो। पर तुमने कभी अपने घर के लोगों के बारे में अपनी राय नहीं दी।''

''दीदी, जो मैं समझ सकता हूँ, वह अवश्य ही बता दूँगा।'' गोपीनाथ ने कहा।

''तो सबसे पहले अपने दोनों बहनोइयों के बारे में कुछ कहो!'' रमा बोली।

गोपीनाथ ने कहा, ''मोहनदत्त जीजाजी और केशव जीजाजी की कार्य-क्षमता अद्भुत है। साधारणतया ऐसा देखने में आता है कि अगर माता-पिता के पास काफ़ी धन-दौलत हुआ तो
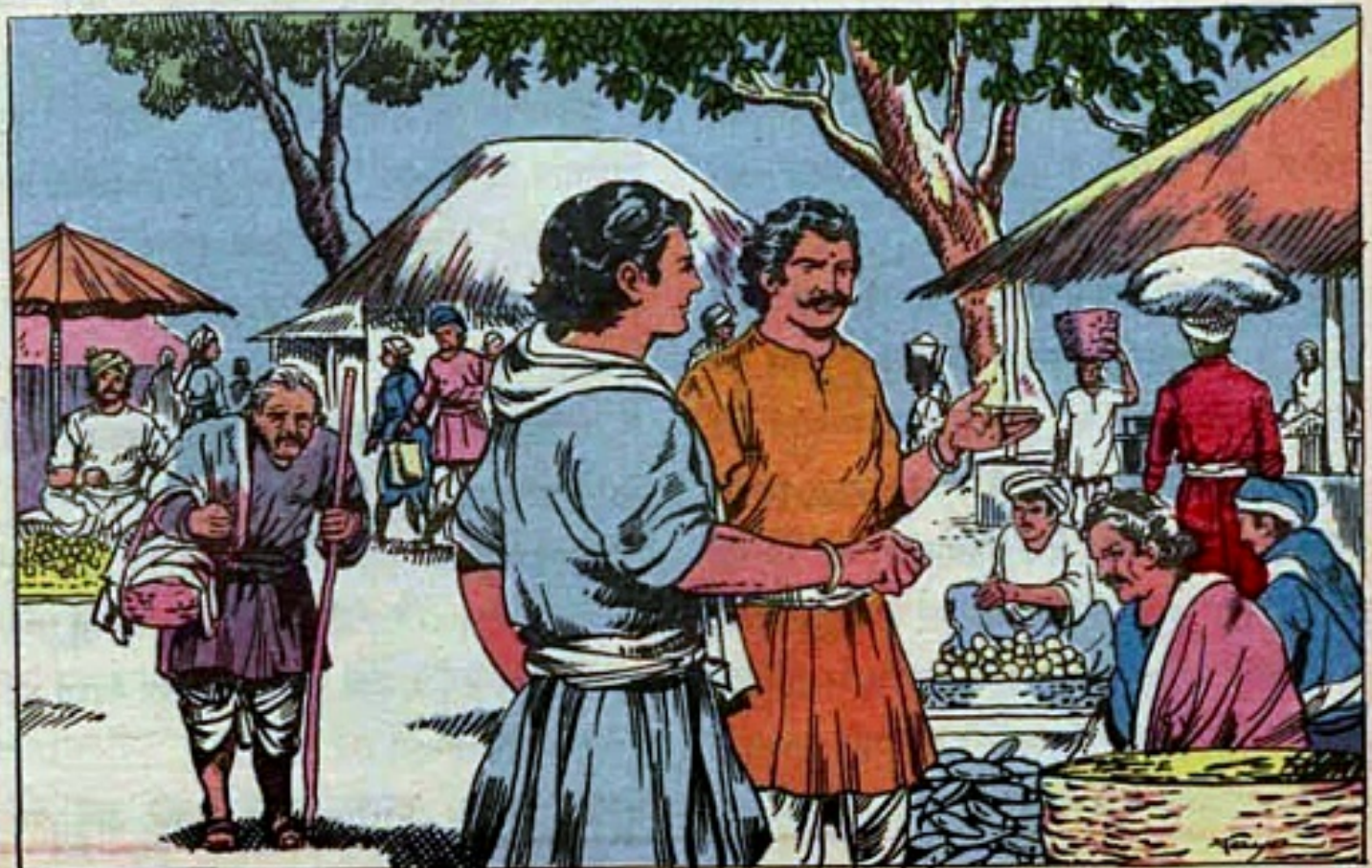
लड़के प्रायः निकम्मे और उच्छृंखल निकल जाते हैं। पर हमारे दोनों जीजाजी इस बात का अपवाद हैं। उन्होंने न केवल ऊँची शिक्षा प्राप्त की, बल्कि धन कमाने में भी अपनी मेहनत और कुशलता दिखायी।"

इसके बाद गोपीनाथ ने अपने बड़े भाई रामनाथ के विषय में अपना मत प्रकट करते हुए कहा, "न्यायाधीश को सलाह देना तलवार की धार पर चलने के समान है। यदि न्याय-निर्णय सही हुआ तो उसका श्रेय न्यायाधीश को मिलता है, पर ऐसा न होने पर सारी भूल सलाहकार की मानी जाती है। कहने का अर्थ यह कि सलाहकार को कभी यश नहीं मिलता, पर हमारे रामनाथ भैया को मिला है। यह एक बड़ी बात है।"

अब बड़ी बहन लक्ष्मी के बारे में बोलते हुए गोपीनाथ ने कहा, "बड़ी दीदी बचपन से ही गृहकार्यों में लगी रहती थीं। वे एक ओर रसोई बनाने में माँ का हाथ बंटाती थीं तो दूसरी ओर चटाई बुनना, सिलाई, कढ़ाई करना तथा और भी कई किस्म की दस्तकारी करने में अपने को व्यस्त रखती थीं। उन्होंने कम उम्र में ही अनेक काम सीख लिये थे। यह निश्चय ही उनकी विशेषता है।"

"गोपी, अब मेरे बारे में बताओ।" रमा ने कहा।

"तुम संगीत सीखती हो, यह तुम्हारी विशेषता है।" गोपीनाथ ने तुरन्त उत्तर दिया।

"गोपी, तुम अच्छी तरह जानते हो कि मैं संगीत में विशेष कुछ नहीं जानती। तुम मेरा मज़ाक उड़ा रहे हो!" रमा बोली।

गोपीनाथ हंसकर बोला, "दीदी, बड़ी विशेषता तो निश्चित है। तुम वृकोदर शास्त्री के यहाँ संगीत सीखने के बाद भी इतना अच्छा गा लेती हो, तो मानना पड़ेगा कि यह तुम्हारी अपनी विशेषता है।"

गोपीनाथ की यह टिप्पणी सुनकर सब खिलाखिलाकर हँस पड़े।

विलासपुर में यह जनश्रुति थी कि वृकोदर शास्त्री जब अपने शिष्यों को सिखाते थे तो उन्हें इतना घबरा देते थे कि उन्हें सीखी हुई विद्या भी भूल जाती थी।

गोपीनाथ ने अब अपनी माँ पार्वती के विषय

में कहा, "हमारी माँ ने अपने सब बच्चों को पाल पोसकर बड़ा किया और उन्हें योग्य बनाया है। इसका पूरा श्रेय हमारी माँ को जाता है। पिताजी ने कभी धन उपार्जन के बारे में विचार नहीं किया, फिर भी माँ ने कभी कोई शिकायत-शिकवा मन में नहीं रखा। जो कुछ भी उन्हें मिला, उसी में उन्होंने किफ़ायत के साथ अपनी गृहस्थी चलायी।"

पुत्र के इस कथन से पार्वती लज्जित हो उठी और बोली, "अब तुम अपने पिताजी के बारे में भी तो कुछ बताओ!"

उमाशंकर के मन में भी यह जानने का कुतूहल था कि उनका बेटा उनके बारे में कैसी राय रखता है। राजा के प्रशंसापात्र गोपीनाथ की राय को सभी मूल्य देते थे।

माँ की बात सुनकर गोपीनाथ ने साफ़ कह दिया, "अब मैं इस परिवार के किसी भी सदस्य के बारे में कुछ नहीं कहूँगा।"

पुत्र की यह बात सुनते ही उमाशंकर तुरन्त उठ खड़े हुए और कमरे से बाहर चले गये। पार्वती ने समझ लिया कि गोपीनाथ के इस रुख़ से उमाशंकर को आघात लगा है। पति की उद्विग्नता का अन्दाज़ लगा वह उनके पीछे-पीछे बाहर चली आयी।

पार्वती ने उमाशंकर से पूछा, "तुम इस तरह बीच में उठकर चले क्यों आये?"

उमाशंकर ने कहा, "मैं सब प्रकार से असमर्थ हूँ। हमारे पुरखों से जो धन मुझे प्राप्त हुआ, उसी से हमारे बच्चे पलकर बड़े हुए। इस समय भी मेरे पास कुछ नहीं है। बेटों की

आमदनी से ही घर का खर्च चलता है। आज मैं समझ गया हूँ कि मैंने ऐसा कोई कार्य नहीं किया है कि बच्चे मेरा आदर कर सकें।"

उमाशंकर का उत्तर सुनकर पार्वती का हृदय कचोट उठा। पार्वती ने पति को समझाने के लिए कहा, "गोपीनाथ ने तुम्हारे बारे में यदि कुछ बताने से इनकार किया है तो उसे इस रूप में नहीं लेना चाहिए। तुम इस तरह उठकर चले आये, बोलो, लड़की-दामाद सब क्या सोचेंगे?" पार्वती ने अपने पति को समझाया बुझाया और उन्हें लेकर कमरे की ओर चल पड़ी।

अभी वे कमरे के निकट पहुँचे ही थे कि उन्हें जो बातचीत की भनक मिली, वे ड्योढ़ी के पास ही ठिठक गये। गोपीनाथ अपने पिता के बारे में कह रहा था, "आप सबके बारे में जो थोड़ा-बहुत मैं समझ सकता था, मैंने कुछ कहने का साहस किया। पर पिताजी के बारे में कुछ भी कहना मेरे लिए संभव नहीं है। वे तो महान हैं। उनकी कविता मैं समझ नहीं पाता। उनकी इस दानशीलता को भी मैं नहीं समझ पाता, जो वे स्वयं कष्ट झेलकर दूसरों के लिए करते हैं। उनकी इस महनीय विचार-बुद्धि को भी मैं समझने में असमर्थ हूँ कि कविता का उपयोग धनार्जन के लिए नहीं करना चाहिए। उन्हें समझने के प्रयास में ही मैंने यह थोड़ी-सी समझ और बुद्धि अर्जित की है। मैं कल्पना में भी उनका मूल्यांकन करने का साहस नहीं कर सकता, अब आप लोग ही बतायें कि मैं उनके बारे में कैसे कुछ बोल सकता हूँ?"

ये बातें सुनकर कवि उमाशंकर तुरन्त कमरे में गये और गोपीनाथ को गले लिया, फिर बोले, "बेटा, मेरा सारा बड़प्पन तुम्हारे जैसे पुत्र को पाने में है।"

गोपीनाथ ने अपने पिता के चरण छूकर कहा, "पिताजी, किसी भी पुत्र को अपने पिता का मूल्यांकन करने का अधिकार नहीं है। मेरे भाई, बहन, माताजी सबने आपके आदर्श के बल से विश्वास पाकर अपने कार्यों को समुचित रूप से संपन्न किया है।"

इसप्रकार उमाशंकर के शांत जीवन में प्रसन्नता के चार चाँद लग गये।

हार का हीरा

गोवर्द्धनगिरि के महाराज किशोरवर्मा के एक ही पुत्री थी । नाम था मनोरमा । जब राजकुमारी मनोरमा वयस्क हुई तो हिमपुरी के युवराज जयसेन के साथ उसका विवाह निश्चित हुआ ।

महाराज किशोरवर्मा ने विवाह के समय राजकुमारी के पहनने के लिए एक सुन्दर हार बनवाया । पर उस हार की मध्यमणि के रूप में उन्हें उच्च कोटि का हीरा नहीं मिल सका ।

महाराज की आज्ञा से अनेक जौहरियों ने असंख्य मूल्यवान हीरे राजकुमारी मनोरमा को दिखाये, पर मनोरमा को उनमें से एक भी पसन्द नहीं आया । उन्हीं दिनों कांचनपुर से धनगुप्त, चन्दनपुर से चंद्रचूड और वरुणपुर से नागदत्त नाम के जौहरियों का आगमन हुआ । तीनों ने ही अपने हीरे राजकुमारी को दिखाने चाहे ।

सर्वप्रथम धनगुप्त राजकुमारी के पास आया । उसने अपने सारे हीरे एक थाल में डाल दिये । मनोरमा कुछ देर तक उन हीरों को उलट-पलट कर देखती रही, पर कोई निर्णय न कर सकी । तब उसने धनगुप्त से कहा, "ये सभी हीरे अच्छे हैं । पर मेरी समझ में नहीं आ रहा है कि इनमें से कौनसा हीरा चुनूँ ?"

धनगुप्त ने थाल में से तुरन्त एक हीरा उठाकर कहा, "राजकुमारी, आपके हार के लिए यह हीरा अत्यन्त उत्तम रहेगा ।"

मनोरमा को धनगुप्त की बात अच्छी नहीं लगी । वह कुछ क्रुद्ध होकर बोली, "हीरे का चुनाव तो मुझे करना है, आपको नहीं ।"

इसके बाद जौहरी चंद्रचूड़ आया । उसने भी अपने हीरे थाल में बिछा दिये । उन्हें देखकर राजकुमारी बोली, "ओह, ये हीरे तो अद्‌भुत हैं । मेरी समझ में नहीं आता कि मैं अपने हार के लिए कौन सा हीरा चुनूँ ?"

शीला गोयनका

राजकुमारी की बात सुनकर चंद्रचूड ने थाल में से एक हीरा उठाया और बोला, "राजकुमारी के हार के लिए यही सर्वोत्तम हीरा है ।"

मनोरमा इस बार और भी अधिक कुपित होगयी, बोली, "हीरे का चुनाव तो मुझे करना है, आपको नहीं ।"

इसके बाद जौहरी नागदत्त ने प्रवेश करके कहा, "मैं राजकुमारी के लिए एक अद्‌भुत हीरा लाया हूँ। उसे आप स्वयं ही पहचान लेंगी।" यह कहकर उसने हीरों को थाल में उँड़ेल दिया ।

मनोरमा ने कुछ देर हीरों को परखकर देखा । फिर उनमें से एक हीरे ने उसका ध्यान विशेष रूप से आकर्षित किया । राजकुमारी ने वह हीरा उठा लिया और बोली, "मुझे अपने हार के लिए यह हीरा पसन्द है ।" राजकुमारी ने नागदत्त को हीरे का मूल्य तो दिया ही, इतना सुन्दर हीरा लाने के उपलक्ष्य में पुरस्कार भी प्रदान किया ।

नागदत्त ज्यों ही राजभवन से बाहर आया, धनगुप्त और चंद्रचूड ने उसे घेर लिया और बधाई देकर पूछा, "नागदत्त, हम अत्यन्त क़ीमती हीरे बहुसंख्या में लेकर आये, फिर भी हम राजकुमारी को संतुष्ट नहीं कर पाये । पर तुम्हारे हीरों में से राजकुमारी ने तुरन्त हीरा चुन लिया । क्या तुम इसका कारण बता सकते हो ?"

नागदत्त ने कहा, "देखो, भाई ! तुम दोनों ने राजकुमारी को सभी मूल्यवान हीरे दिखलाये थे, इसलिए वे उनमें से अपने हार के लिए उचित हीरे का चुनाव नहीं कर पायीं ।"

"यह बात तो सच मालूम होती है, पर तुमने ऐसा क्या किया कि उन्होंने हीरे का चुनाव इतनी जल्दी और इतनी आसानी से कर लिया ?" दोनों जौहरियों ने पूछा ।

नागदत्त हँसकर बोला, "मैंने एक ही बहुमूल्य हीरा लिया और उसे अन्य साधारण हीरों में मिला दिया । फिर उस हीरे को सब हीरों के साथ थाल में बिछा दिया । एक ही विशिष्ट हीरा होने के कारण राजकुमारी को उस हीरे का चुनाव करने में एक क्षण से अधिक नहीं लगा ।"

राजकुमारी के हार में हीरा जड़ दिया गया । उसकी सुन्दरता और राजकुमारी के चुनाव की सभी ने प्रशंसा की ।

[१३]

[चित्रसेन ने राज्य में आतंक मचा रहे लुटेरों तथा डाकुओं पर बड़ी कुशलता के साथ क़ब्जा कर लिया। इस बीच रानी कांतिमती ने एक पुत्र को जन्म दिया। जब वह पाँच वर्ष का हुआ, तब उग्राक्ष आ पहुँचा। चित्रसेन ने उग्राक्ष को पाँच वर्ष का एक बालक सौंप दिया। उग्राक्ष ने रास्ते में ही समझ लिया कि वह बालक राजकुमार नहीं है! आगे पढ़िये ...]

उग्राक्ष राजकुमार अमितसेन कहकर दिये गये रसोइये के पुत्र को लेकर कपिलपुर दुर्ग के पास पहुँचा। वह क्रोध के कारण उबल रहा था, फिर भी चित्रसेन की मित्रता के ख्याल से उसने अपने पर थोड़ा नियंत्रण रखा था, वरना वह अब तक विध्वंस मचा देता। उग्राक्ष को देखकर चित्रसेन का सेनापति अमरपाल दौड़कर चित्रसेन के पास गया और बोला, "महाराज, उग्राक्ष भारी-भारी डगों से दुर्ग के भीतर प्रवेश कर रहा है। उसके मुख से हुंकारा निकल रहा है।"

चित्रसेन ने सुना तो वह स्तम्भित रह गया। रानी कांतिमती भी चकित रह गयी। चित्रसेन ने कहा, "इसका मतलब है कि उग्राक्ष ने समझ लिया है कि वह बालक राजकुमार नहीं है! उसे वास्तविकता का ज्ञान हो गया है।"

"महाराज, हम उसे धोखा नहीं दे सकते। उग्राक्ष राक्षस है, साथ ही महाबलशाली भी है। हमें बहुत सोचविचारकर अगला कदम उठाना

चाहिए । कहीं ऐसा न हो कि हम किसी बड़ी मुसीबत में फँस जायें । अभी करवीर और नागवर्मा का ख़तरा टला नहीं है ।'' अमरपाल ने कहा ।

''तुम्हारा कहना सच है, अमरपाल !'' यह कहकर चित्रसेन क्षण भर चुप रहा, फिर कांतिमती की ओर देखकर बोला,'' अब चिंता करने से कोई लाभ नहीं है । जब मैंने उसे वचन दिया था, तब मैं स्वयं एक राजकुमार था, आयु में कम और पिता का छोटा पुत्र । मैंने तब यह कल्पना तक नहीं की थी कि एक दिन मेरा दिया वचन मुझ पर इतना भारी होकर गुज़रेगा ।''

''महाराज, यदि उग्राक्ष का घात कर दिया जाये तो ?'' अमरपाल ने व्यग्रता दिखाते हुए पूछा ।

''यह काम इतना सरल नहीं है, जितना तुम समझते हो । अगर हम इसे संभव भी कर लें तो राज्य में हलचल मच जायेगी और मेरे विषय में यह अपयश फैल जायेगा कि मैंने वचन भंग किया है ।'' चित्रसेन ने कहा ।

रानी कांतिमती झट आसन से उठ खड़ी हुई और बोली, ''महाराज, राक्षस और बाल राजकुमार का निर्णय मुझ पर छोड़ दीजिए ।'' यह कहकर वह अपने कक्ष की ओर चल पड़ी ।

इतने में उग्राक्ष राजमहल के निकट पहुँच कर पुकारने लगा, ''महाराज, महाराज !'' यह पुकार सुनकर चित्रसेन और अमरपाल महल की सीढ़ियाँ उतरकर नीचे आये ।

चित्रसेन ने उग्राक्ष की ओर देखकर मुस्कराते हुए पूछा, ''उग्राक्ष, क्या बात है ! हम अभी तुम्हारे बारे में ही बात कर रहे थे ।''

''महाराज, यह धोखा है, दग़ा है । विश्वासघात है ! मैंने कभी नहीं सोचा था कि आप मेरे साथ छल करेंगे और अपना वचन पलटेंगे । आप क्षत्रिय हैं और मैं आपका मित्र हूँ । कपिलपुर का राज्य दिलाने में मैंने आपकी मदद की है । आपको ऐसा नहीं करना चाहिए था ।'' उग्राक्ष ने अपने कंधे पर से बालक को उतार कर कहा ।

''उग्राक्ष, दासियों से भूल हो गयी है । उन लोगों ने जल्दबाज़ी में राजकुमार के बदले मंत्री-पुत्र को तुम्हें दे दिया है ।'' अमरपाल ने कहा ।

"क्या यह मंत्री का पुत्र है ? अहह !" उग्राक्ष ठठाकर हँस पड़ा और उस बालक को अपने दोनों हाथों से ऊपर उठाकर बोला, "यह तो रसोइये का लड़का है। न तो राजकुमार है और न मंत्री-पुत्र ही। मैं केवल महाराजा चित्रसेन की प्रथम संतान चाहता हूँ। यदि उसके बदले मुझे यह सारा राज्य भी दिया गया, तब भी मैं स्वीकार नहीं करूँगा। आप अपने वचन का पालन कीजिए! इसी में आपकी सच्चाई है। इसी में आपका यश है।"

"थोड़ा धीरज रखो, उग्राक्ष! दासियों से जो भूल हुई है, हम उसका सुधार अभी किये देते हैं। मैंने आज्ञा दी है कि राजकुमार को सज्जित कर तुरन्त उसे यहाँ ले आयें।" चित्रसेन ने कहा।

कुछ ही क्षणों में दासियाँ एक बालक को वहाँ ले आयीं। बालक ने उत्तम रेशमी वस्त्र धारण कर रखे थे। उन्होंने वह बालक उग्राक्ष के सामने खड़ा कर दिया। उग्राक्ष ने उस बालक को परख कर देखा, फिर दासियों की तरफ़ कड़ी नज़र डालकर पूछा, "दासियो, तुमने इस बार तो कोई जल्दबाज़ी नहीं की है न? कहीं इस बार भी तो राजकुमार के बदले किसी और बालक को मुझे नहीं दे रही हो? अगर इस बार धोखा हुआ तो तुम्हारी कुशल नहीं।"

"तुम्हें अगर संदेह हो तो इस बालक से ही पूछ लो!" दासियों ने जवाब दिया। इस बीच चित्रसेन वहाँ से चला गया था। उग्राक्ष बालक के निकट आया और उसे अपनी गोद में उठाकर पूछा, "बेटा, तुम्हारा नाम क्या है?"

"मेरा नाम युवराज है!" उस सुन्दर बालक ने उत्तर दिया।

दासियां खिलखिलाकर हँस पड़ीं और बोलीं, "उग्राक्ष, तुम्हारा सवाल बड़ा विचित्र-सा है। तुम अगर इस बालक से यह पूछते कि तुम किसके पुत्र हो तो सचाई बड़ी सरलता से प्रकट हो जाती। पर तुम तो राक्षसवंश के ठहरे। मनुष्यों सी बातचीत क्या जानो?"

"अगर आप लोग मुझे धोखा देना चाहते हैं तो बालक को पहले ही सिखा दिया होगा कि उसे कौन से सवाल का क्या उत्तर देना है। इसलिए मैंने दूसरी तरह से सवाल करना ठीक समझा। यह राजकुमार ही है या अन्य कोई बालक, इसके

लकड़ी दिखाई दी जो उसने रसोइये के बेटे के माँगने पर उसे दी थी। उसने बालक को कंधे से उतार दिया और लकड़ी का टुकड़ा उसके हाथ में देकर पूछा, "बेटा, युवराज! अगर मैं यह लकड़ी तुम्हें दूँ तो तुम इसका क्या करोगे?"

"मैं इससे कुछ भी नहीं करूँगा, पर इसे मैं अपने बाप को दे दूँगा।" बालक ने उत्तर दिया।

बालक का उत्तर सुनकर उग्राक्ष फिर चौंक उठा। उसका संदेह पक्का होने लगा कि उसे दुबारा धोखा दिया गया है।

"तुम्हारा बाप इस लकड़ी से क्या करेगा?" उग्राक्ष ने पूछा।

"अगर कोई भेड़ झुंड से अलग होकर भागना चाहेगी तो वह इस लकड़ी से उसका पैर तोड़ देगा।" बालक बोला।

"अरे, बच्चू! अब मुझे मालूम होगया कि तुम राजा के यहाँ काम करनेवाले गड़रिये के बेटे हो। ओह, कैसा धोखा! कैसा दग़ा! भेड़ चरानेवाले गड़रिये के पुत्र को राजकुमार बताकर मुझे दे दिया।" उग्राक्ष की आँखों में सुर्खी छागयी। उसने उस बालक को कंधे पर बिठाया और हुंकार करता हुआ कपिलपुर के दुर्ग की ओर चल पड़ा। इस बार उसने तय कर लिया कि वह सबकी चतुरता झाड़ देगा। वह कोई साधारण प्राणी नहीं, राक्षसों का नेता है, अपार शक्तिशाली है।

उग्राक्ष ने जंगल पार किया और जब वह दुर्ग के सामने स्थित मैदान में पहुँचा, तो उसने देखा,

लिए मैं जंगल में इसकी एक परीक्षा लूँगा। यदि धोखा हुआ तो कुशल नहीं! तुम सब दासियां सुन लो! अगर इस बार तुमने कोई छल किया होगा तो मैं तुम सबको यहाँ से उड़ा ले जाऊँगा और अपने राक्षस अनुचरों के साथ तुम्हारा विवाह कर दूँगा।" उग्राक्ष ने कुछ हास्यमिश्रित रोष से कहा।

उग्राक्ष की बात सुनकर कुछ दासियाँ हँस पड़ीं और कुछ दासियाँ डर गयीं। उग्राक्ष ने उस बालक को कंधे पर बिठाया और लंबे-लंबे डग भरता हुआ जंगल की ओर चल पड़ा।

उग्राक्ष जब जंगल में कुछ दूर पहुँच गया तो उसने वास्तविकता का पता लगाने के लिए बालक की परीक्षा लेनी चाही। उसे रास्ते में वही

मैदान में कुछ घुड़सवार तथा पैदल खड़े हुए हैं। उग्राक्ष ने अपने मन में सोचा, कहीं चित्रसेन ने इन्हें मेरे साथ युद्ध करने के लिए तो नहीं भेजा है? जब वह उनके समीप पहुँचा, तब देखता क्या है कि सैनिकों के सामने अमरपाल और उसकी बग़ल में चमचमाते रेशमी वस्त्र धारण किये हुए पाँच वर्ष का बालक खड़ा है। उग्राक्ष संतुष्ट होकर मन ही मन सोचने लगा कि निश्चय ही यह बालक राजकुमार होना चाहिए।

उग्राक्ष अभी कुछ क़दम पर था कि अमरपाल ने घोषणा करने के स्वर में कहा, "उग्राक्ष, देखो, यही राजकुमार है। दूसरी बार भी दासियों से ग़लती होगयी। तुम बुरा मत मानो!"

"क्या ये सारी ग़लतियां दासियां ही कर रही हैं?" उग्राक्ष ने उपेक्षा से हँसकर कहा, फिर पूछा, "इस बार तो तुम भूल से किसी और के बालक को मुझे सौंपने नहीं जा रहे हो?"

"यह बालक कोई और नहीं, महाराज चित्रसेन की प्रथम संतान राजकुमार अमितसेन हैं!" अमरपाल के स्वर में क्रोध झलक रहा था।

उग्राक्ष ने बालक को परखकर देखा। उसे निश्चय होगया कि यह बालक अवश्य ही राजकुमार है। फिर बोला, "आप लोगों ने मुझे भी थकाया और स्वयं भी श्रम उठाया, अच्छा होता, दो बार भूल न करके पहले ही राजकुमार को मेरे हाथों में सौंप देते,महाराज चित्रसेन ने मित्र होकर भी ऐसा क्यों किया, मैं समझ नहीं पा रहा हूँ।"

"उग्राक्ष, तुम राक्षस हो, समझ न सकोगे कि माता-पिता का वात्सल्य कैसा होता है? महारानी कांतिमती बेहोश हैं, महाराज अतिशय दुख के कारण अपने कक्ष में लेटे हुए हैं। उन्होंने आगा-पीछा सोचे बिना तुम्हें जो वचन दिया था, आज उसका दुखदायी परिणाम उन्हें सहन करना पड़ रहा है। तुम्हारे अन्दर भावना नहीं है, इसलिए तुम जान नहीं सकते। किसी का कुछ भी क्यों न हो, तुम्हारा काम तो बन गया न? अब तुम जाओ!" अमरपाल ने कहा।

"हाँ, अमरपाल! मेरा काम तो अवश्य बन गया है।" उग्राक्ष ने कुछ मुँह बनाकर कहा, फिर राजकुमार को कंधे पर बिठाकर बोला, "मैं किसी दिन आकर महाराज के दर्शन कर लूँगा।" यह

कहकर वह जंगल की तरफ चल पड़ा।

"राजकुमार को किसी प्रकार का कष्ट न हो, यह जिम्मेदारी तुम्हारी है। इन्हें तुम्हें सावधानी से पाल-पोसकर बड़ा करना होगा, समझे!" अमरपाल ने पीछे से कठोर स्वर में कहा।

अमरपाल की चिल्लाहट सुनकर उग्राक्ष रुक गया, फिर मुड़कर हुंकार करते हुए बोला, "आज से यह महाराजा चित्रसेन का पुत्र अमितसेन नहीं है, आज से यह मेरा पुत्र है और इसका नाम होगा उग्रदत्त! समझे!"

उग्राक्ष के उत्साह का कोई पार नहीं था। वह जंगल में बढ़ चला। उसने अपने क़िले की ओर बढ़ते हुए कंधे पर बैठे राजकुमार से कहा, "बेटे, आज से तुम मेरे पुत्र हो! तुम्हारा नाम उग्रदत्त है। यह सारा जंगल तुम्हारा है। तुम्हारी सेवा करने के लिए सैंकड़ों सेवक क़िले में मौजूद हैं। तुम जो कहोगे, वह सबके लिए आदेश होगा और सब उसका पालन करेंगे।"

कुछ ही देर में उग्राक्ष अपने क़िले के पास पहुँचा। क़िले के सामने उसके राक्षस अनुचर अपने परिवारों के साथ पंक्ति बद्ध खड़े हुए थे। वे लोग उग्राक्ष को राजकुमार के साथ आते हुए देखकर जय जयकार कर उठे। उग्राक्ष ने उन्हें बता रखा था कि एक दिन वह उनके भावी महाराजा को अपने साथ लायेगा।

उग्राक्ष ने राजकुमार की ओर संकेत करके अपने सेवकों से कहा, "यह बालक तुम्हारा भावी नेता और सरदार है। इसका नाम उग्रदत्त है।" बस फिर क्या था, दूसरे ही क्षण ये नारे गूँज उठे, "उग्रदत्त की जय!" इसके बाद उग्राक्ष ने क़िले में प्रवेश किया। वहाँ सुन्दर सजे एक कमरे में उग्राक्ष ने बालक को कंधे से उतार दिया, फिर कहा, "उग्रदत्त, यह कमरा तुम्हारा है। मैं तुम्हारे साथ खेलने के लिए तुम्हारी उम्र के दो बालकों को यहाँ लाने की व्यवस्था करता हूँ।"

इसके बाद उग्राक्ष ने अपने चार मुख्य अनुचरों को बुलाकर आदेश दिया, "तुम लोग तुरन्त जाओ और उग्रदत्त की उम्र के दो बालकों का अपहरण कर ले आओ! यह काम बड़ी होशियारी से गुप्त रूप से होना चाहिए। महाराज चित्रसेन को इस बात का पता नहीं लगना चाहिए वरना हम बहुत मुश्किल में पड़ जाये। उन्हें यदि यह पता लग गया कि हम उनके राज्य में घुसकर

बच्चों का अपहरण करते हैं, तो हमारी ख़ैर नहीं ।"

"तब तो रात के वक्त यह काम करना उचित होगा ।" एक सेवक ने कहा ।

"ठीक है, पर याद रखना, बालक सुन्दर और स्वस्थ होने चाहिएं । जिन घरों से तुम बच्चों का अपहरण करो, उस घर में सोने की मुद्राओं से भरी ये दो थैलियां छोड़ आना ।" यह कहकर उग्राक्ष ने अपने सेवकों के हाथ में स्वर्ण मुद्राओं से भरी दो थैलियां थमा दीं ।

कुछ दिन बीत गये । एक दिन सुबह के समय उग्राक्ष बड़े लाड़-प्यार से उग्रदत्त को खिला रहा था कि वे चारों विश्वसनीय सेवक वहाँ गीत गाते, सीटी बजाते आये । उनकी गोद में उग्रदत्त के समवयस्क दो बालक थे ।

उन बालकों को देखकर उग्रदत्त उत्साहित होकर उछल कूद करने लगा । लेकिन वे दो बालक डर के कारण काँप रहे थे । उग्राक्ष ने सेवकों से पूछा, "तुम लोग सबकी आँख बचाकर तो इन बालकों को लाये हो न ?"

"महानायक ! हम सबकी आँख बचाकर इन बालकों को उठा लाये हैं । जब हमने इन्हें उठाया, उस समय वहाँ कोई नहीं था । आपने जो सोने की मुद्राओंवाली थैलियां दी थीं, उन्हें हम वहीं पर छोड़ आये हैं ।" राक्षस सेवकों ने कहा ।

इतने में नये बालक एक साथ ज़ोर-ज़ोर से रोने लगे। उन्हें देखकर उग्रदत्त भी चीखकर रोने लगा। उग्राक्ष तीनों बालकों को पुचकारने लगा, फिर अपने सेवकों से बोला, "तुम लोग इन बच्चों को बगीचे में ले जाओ । वहाँ इन्हें खेलों से बहलाने का प्रयत्न करना । शायद वहाँ बाघ और हाथी के बच्चों को देखकर ये बच्चे रोना बंद कर दें । जब तक ये बच्चे पलकर बड़े न हो जायें, तब तक ग्रामवासियों को इन दोनों अपहृत बच्चों का पता नहीं लगना चाहिए।

सेवकों ने उग्राक्ष के आदेश का पालन किया और तीनों बालकों को दुर्ग के पीछे स्थित बगीचे में ले गये । वहाँ बाघ, भालू हाथी आदि जानवरों के बच्चे पेड़ों के नीचे खेल रहे थे । उन्हें देखते ही उग्रदत्त तथा उन दोनों बच्चों ने भी रोना बन्द कर दिया ।

(क्रमशः)

राजा और डाकू

दृढ़व्रती विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आये, पेड़ पर से शव उतारा और कंधे पर डालकर सदा की भाँति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगे। तब शव में वास करनेवाले बेताल ने पूछा, "राजन, इस अर्धरात्रि के समय आपको सुखपूर्वक शैय्या पर शयन करना चाहिए था, पर मैं समझ नहीं पाता कि आप किस प्रयोजन से प्रेरित होकर इस भयानक श्मशान में इतना श्रम कर रहे हैं। कहीं ऐसा तो नहीं है कि राजा ललितादित्य की भाँति आपने जनता में अपनी लोकप्रियता खो दी है और अब किसी शत्रु के भय से यहाँ भटक रहे हैं? राजा को सदा विवेकशील और पुरुषार्थी होना चाहिए। इस सन्दर्भ में मैं आपको राजा ललितादित्य की कहानी सुनाता हूँ। श्रम को भुलाने के लिए सुनिये!"

बेताल कहानी सुनाने लगा :

लक्षण देश पर राजा ललितादित्य का शासन

बेताल कथा

था । उनका जन्मदिन निकट ही था । इस उपलक्ष्य में उन्होंने सोचा कि किसी ऐसे एक व्यक्ति का सम्मान करना चाहिए जो जनता में सर्वाधिक लोकप्रिय हो ।

राजा के विश्वसनीय चरों ने एक माह तक राज्य के एक एक कोने का भ्रमण कर अन्त में यह निष्कर्ष निकाला कि जनता के बीच सर्वाधिक लोकप्रिय व्यक्ति डाकू गजाधरसिंह है । उन्होंने यह सूचना राजा को दे दी ।

चरों के मुख से यह समाचार सुनकर राजा के आश्चर्य का ठिकाना न रहा । राजा ललितादित्य ने अपने मंत्री कपिलेश्वर को बुलाकर कहा, "मंत्रिवर, हमें यह सूचना मिली है कि राज्य में सबसे अधिक लोकप्रिय व्यक्ति डाकू गजाधर सिंह है । उधर हमने राज्य भर में इस आशय का ढिंढोरा पिटवाया है कि लुटेरे और हत्यारे डाकू गजाधर को जो भी व्यक्ति जीवित या मुर्दा पकड़कर लायेगा, उसे एक लाख रजत मुद्राएं पुरस्कार में दी जायेंगी । हम बड़े धर्मसंकट में पड़ गये हैं । लोकप्रियता के नाम पर हम एक डाकू का सम्मान कैसे कर सकते हैं ?"

"जी हाँ, महाराज ! आपका कहना सत्य है । हमें इस समस्या पर बड़ी गंभीरता से विचार करना चाहिए ।" मंत्री ने उत्तर दिया ।

"मंत्री कपिलेश्वर, गजाधर आज तक इसीलिए नहीं पकड़ा जा सका, क्योंकि उसे जनता का सहयोग प्राप्त है । राजा ने जिस डाकू को ज़िन्दा या मुर्दा पकड़कर लाने के लिए इनाम की घोषणा की हो, यदि प्रजा उसका बचाव करती है तो यही मानना पड़ेगा कि लोगों के हृदय में उसका आदर है । क्या यह राजद्रोह नहीं है ?" राजा ललितादित्य के स्वर में रोष था।

मंत्री कपिलेश्वर कुछ देर सोचता रहा, फिर बोला, "महाराज, हमें सबसे पहले इस बात का पता लगाना होगा कि हमारी प्रजा में वे किस तरह के लोग हैं जो डाकू का आदर करते हैं ? जब तक हम बात के मूल में नहीं पहुँचेंगे, समस्या का समाधान नहीं हो सकेगा । ऐसा भी हो सकता है कि स्थितियां जटिल रूप धारण कर लें और हम अपने राज्य के अन्दर तथा बाहर भी उपहास के पात्र बन जायें ।"

इसके बाद राजा ललितादित्य और मंत्री

कपिलेश्वर ने बहुत सोच-विचार के बाद एक निर्णय लिया। जनता डाकू गजाधर का आदर क्यों करती है, यह जानने के लिए दोनों छद्मवेश में लक्षण देश का भ्रमण करने निकल पड़े।

राजा और मंत्री ने राज्य भर का भ्रमण किया और गजाधर के बारे में जनता का विचार जानने का प्रयत्न करने लगे। वे जिन लोगों से भी गजाधर के बारे में प्रश्न करते, एक ही उत्तर मिलता, गजाधर सिंह तो देवता के समान है। न तो किसी ने उसकी शिकायत की, न उसका पता-ठिकाना बताया।

एक दिन राजा और मंत्री किसी गाँव की एक सराय में ठहर गये। वहाँ लोकनाथ नाम के एक व्यक्ति से उनका परिचय हुआ। राजा और मंत्री ने अपने को परदेशी बताकर उससे पूछा, "हमने सुना है कि तुम्हारे राजा ने यह ऐलान करवाया है कि जो भी व्यक्ति राज्य के कुख्यात डाकू गजाधर सिंह को पकड़कर उन्हें सौंपेगा, उसे एक लाख रजत मुद्राएं दी जायेंगी। हम दोनों उस डाकू को पकड़ने और एक-लाख मुद्राएँ पाने के विचार से इस राज्य में आये हुए हैं। लेकिन हम जिस किसी के सामने गजाधर का नाम लेते हैं, वह यही कहता है कि गजाधर तो देवता है। एक डाकू को देवता कहना, क्या आश्चर्य की बात नहीं है?"

उनका प्रश्न सुनकर लोकनाथ ठहाका मारकर हँस पड़ा और बोला, "जनता के हृदय में गजाधर के प्रति जो आदरभाव है, उसे जानकर भी यदि आप अपने विचार पर टिके रहते हैं, तो

समझना चाहिए कि आप सचमुच परदेसी हैं।"

राजा ललितादित्य ने कुछ क्रोध से कहा, "एक डाकू को देवता मानकर उसका बचाव करनेवाली इस देश की प्रजा नैतिक दृष्टि से कितनी पतित है, यह साफ़ मालूम हो जाता है। तुम्हारे राजा धर्मात्मा हैं, इसीलिए वे प्रजा के इस अनाचरण को इतनी उदारतापूर्वक सहन कर रहे हैं। यदि ऐसी कोई घटना दूसरे राज्य में हुई होती तो यह कार्य राजद्रोह माना जाता।"

लोकनाथ ने राजा की आँखों में तीक्ष्ण दृष्टि से देखकर साहसपूर्वक कहा, "इस देश के राजा की तुलना में गजाधर क़तई डाकू नहीं है।"

राजा ललितादित्य का इतना सुनना था कि उनका क्रोध भड़क उठा। वे कठोर स्वर में कुछ कहने को हुए कि मंत्री ने इशारा करके उन्हें रोक

वे ज़बर्दस्ती कर वसूल करते हैं। इतना ही नहीं, वे कर से होनेवाली राज्य की आय से थोड़ा-सा हिस्सा भी जनता के कल्याण के कार्यों में खर्च नहीं करते। जबकि गजाधर ठीक इसके विपरीत है। वह अन्यायपूर्वक धन कमानेवालों तथा भ्रष्टाचारियों को ही लूटता है और इस प्रकार प्राप्त धन को गरीबों में बाँट देता है। यहाँ तक कि वह अपने ऊपर भी कुछ खर्च नहीं करता। उसकी उपकार-भावना से हज़ारों ग़रीब परिवारों का कष्ट दूर हुआ है। ऐसी स्थिति में यदि जनता उसे देवता कहती है तो कौन से आश्चर्य की बात है?"

मंत्री कपिलेश्वर ने मुस्कराकर कहा, "तुम्हारे कथन में सत्य का अंश तो अवश्य है, पर उसे पूरी तरह सही मान लेना उचित नहीं है। कर लगाना और उसे वसूल करना, उस धन के उपयोग के बारे में निर्णय लेना— ये सब राज्य के काम हैं और राजा इनका निर्णायक होता है। गजाधर यदि कानून को हाथ में लेकर राजा के कार्यों में दख़ल देता है और राजा के खिलाफ़ वातावरण बनाता है तो यह तो अवश्य ही राजद्रोह है। हमें तो सन्देह होता है कि वह किसी दिन राजगद्दी को भी हथियाने की कोशिश कर सकता है।"

दिया। मंत्री के मन में अचानक यह विश्वास जगा कि लोकनाथ के मुख से गजाधर के बारे में वास्तविक समाचार जाना जा सकता है। उसने नम्रता दिखाते हुए कहा, "क्षमा करो भाई, गजाधर के प्रति जनता का आदर-भाव जानकर भी हमने कुछ कठोरता दिखायी है। लेकिन एक शंका हमारा पीछा नहीं छोड़ रही। हमारी समझ में यह बात नहीं आती कि जनता यह क्यों सोचती है कि गजाधर डाकू नहीं, देवता है और राजा से बढ़कर उत्तम इन्सान है? मुझे यह बात समझ में नहीं आ रही कि राजा का कर वसूल करना क्या डकैती है, लुटेरापन है?"

लोकनाथ कुछ क्षण मौन रहा, फिर बोला, "क्या मैं वास्तविक बात बतादूँ? इस देश के राजा में धनी-निर्धन का कोई विचार नहीं है और

मंत्री की बात पर लोकनाथ ने नकार में अपना सिर हिला दिया और कहा, "गजाधर ऐसी किसी दुष्ट मनोवृत्ति का शिकार नहीं है। पर वह यह अवश्य मानता है कि लोगों की हालत का विचार न करके कर लगाना डकैती जैसा घृणित कार्य ही

है। युद्ध की आशंका न होने पर भी राजा एक लाख सैनिकों का पोषण कर रहे हैं। कुछ दिनों पहले उन्होंने अपने दरबार की नर्तकी के लिए एक सुन्दर भवन बनवाया है और तमाम धन खर्च किया है। अपने सुख-आराम के लिए उन्होंने ग्रीष्म ऋतु के लिए अलग और जाड़े के मौसम के लिए अलग महल बनवाये हैं। क्या यह जनता से कर के रूप में वसूले हुए धन का सही उपयोग है? यही कारण है कि आज जनता की दृष्टि में राजा लुटेरा बन गया है और डाकू जनता का सेवक बनकर सबके प्रेम और आदर का पात्र है।"

लोकनाथ का उत्तर सुनकर राजा ने अपना सिर झुका लिया। वे कुछ देर मौन रहकर लोकनाथ से बोले, "भाई, तुमने गजाधर के बारे में हमें ऐसी अनेक उपयोगी बातें बतायीं, जिनके बारे में हम बिलकुल अपरिचित थे। हम इस बात के लिए अत्यन्त दुखी हैं कि ऐसे परोपकारी व्यक्ति को बन्दी बनाकर राजा से पुरस्कार प्राप्त करना चाहते थे।"

राजा ललितादित्य ने अब भ्रमण में अधिक समय नष्ट करना उचित न समझा। वे मंत्री के साथ राजधानी लौट आये।

दूसरे दिन मंत्री कपिलेश्वर ने राजा ललितादित्य के दर्शन करके कहा, "महाराज, कल सराय में मिला लोकनाथ और कोई व्यक्ति नहीं, स्वयं डाकू गजाधर सिंह था। आप मुझे क्षमा करें, मैंने जानते हुए भी यह बात आपसे छिपायी। मैं यही सोचकर मौन रह गया कि इस क्षण यह प्रकट करना कहीं हानिकारक सिद्ध न हो जाये!"

मंत्री की बात सुनकर राजा ने मुस्कराकर कहा, "मंत्रीवर, मैं भी समझ गया था कि लोकनाथ ही डाकू गजाधरसिंह है।"

इसके बाद राजा ने समर्थ गुप्तचरों को नियुक्त किया और जनता को सतानेवाले राजकर्मचारी तथा अनुचित तरीके से धनार्जन करने वाले भ्रष्टाचारी व्यापारियों का पता लगाया और उन्हें कठिन दण्ड दिया। इसके बाद राजा ललितादित्य ने जनता के लिए अनेक कल्याणकारी कार्यों को किया और प्रजा के हृदय-सम्राट बन गये।

इसके बाद जनता के सेवक और हितैषी गजाधर का नाम-निशान भी न रहा। वह कहाँ चला गया, किसी को नहीं मालूम।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा, "राजन, राज्य भर में राजा के नाम को कलंकित करनेवाला डाकू गजाधर सिंह जब अकेला उनके हाथ लगा तो राजा ने उसे बन्दी क्यों नहीं बनाया ? इससे यही पता लगता है न कि राजा ललितादित्य न केवल अविवेकी थे, बल्कि कायर और पौरुषहीन भी थे । डाकू गजाधर को फाँसी के तख़्ते पर चढ़ाकर इसके उपरान्त ही राजा को प्रजा के कल्याणकारी कार्यों को करना चाहिए था । राजा ने ऐसा क्यों नहीं किया ? यदि आप इस संदेह का समाधान जानबूझकर भी न करेंगे तो आपका सिर फटकर टुकड़े-टुकड़े हो जायेगा ।"

विक्रमार्क ने उत्तर दिया, "राजा ललितादित्य के विषय में डाकू गजाधरसिंह ने जो बातें कहीं, उनसे उन्हें स्पष्ट विदित होगया कि वे जनता की दृष्टि में कितने गिर गये हैं । पर वे यह भी समझ गये कि डाकू गजाधर का राज्य के सर्वाधिक लोकप्रिय व्यक्ति के रूप में सम्मान करना अनुचित है । साथ ही यह भी अनुचित है कि उसे क्षमा कर दिया जाये । इन दोनों ही बातों से गजाधर के प्रभाव के बढ़ने की संभावना थी । अब रही उसे बन्दी बनाकर फाँसी पर चढ़ाने की बात । इस घटना से प्रजा में विद्रोह पैदा हो सकता था । यह कार्य एक प्रकार से जनता की आदर भावना का दमन करने की भाँति होता । इन सभी बातों पर गंभीरता से विचार करके राजा ललितादित्य ने एक तीसरा ही मार्ग निकाला । उन्होंने अपने पद और अपनी सम्पदा के बल पर इतने अधिक लोक कल्याणकारी कार्य किये, जिनकी तुलना में गजाधर के कार्यों का कोई मूल्य नहीं रह गया । इसी कारण प्रजा धीरे-धीरे गजाधर को भूलने लगी और एक दिन उसका नाम-निशान ही मिट गया । इन सब बातों के आधार पर हम कह सकते हैं कि राजा ललितादित्य पौरुषहीन, कायर और अविवेकी नहीं थे, बल्कि उनके अन्दर राजनीति की कुशलता और एक श्रेष्ठ राजा के सभी गुण मौजूद थे ।"

इसप्रकार राजा के मौन होते ही बेताल शव के साथ अदृश्य होकर पुनः पेड़ पर जा बैठा ।

(कल्पित)

मौन भंग

स्रवंती राज्य के राजा कल्याणवर्मा के एक सुन्दर कन्या थी। उसका नाम शोभा था। राजकुमारी शोभा सुन्दरता में ही नहीं, बल्कि बुद्धिमत्ता में भी अद्वितीय थी। शोभा को बहू बनाने के विचार से अनेक राजाओं ने कल्याणवर्मा के पास अपना संदेश भेजा। उन्होंने इस विषय में अपनी पुत्री का विचार जानना चाहा।

एक दिन राजा कल्याणवर्मा ने अपनी पुत्री शोभा से पूछा, "बेटी शोभा, बताओ, तुम अपने लिए कैसे वर की आकांक्षा रखती हो?"

शोभा ने स्पष्ट उत्तर दिया, "पिताजी, मैं ऐसा वर चाहती हूँ जो असाधारण मेधा के साथ अनुपम साहसी भी हो।"

"इस बात का पता लगाने के लिए क्या तुमने कोई उपाय सोचा है?" राजा ने पूछा।

"पिताजी, इसका एक उपाय हो सकता है। मैंने सोचा है कि मैं मौनव्रत धारण करूँगी। अपनी तीक्ष्ण बुद्धि से जो मेरा मौन भंग करके मुझे वार्तालाप के लिए विवश करेगा, मैं उसी के साथ विवाह करूँगी।" शोभा ने कहा।

राजा कल्याणवर्मा ने राजकुमारी की इच्छानुसार राज्य भर में इस आशय का ढिंढोरा पिटवा दिया तथा बाहर भी सन्देश भेज दिये।

राजकुमारी का मौन भंग करके उसके साथ विवाह करने के विचार से अनेक युवक आगे आये, पर किसी को सफलता नहीं मिली, वे अपमानित होकर चले गये।

उन दिनों सुमन्तपुर के युवराज आनन्दवर्धन देशाटन के लिए निकले हुए थे। स्रवंतीपुर आने पर उन्होंने राजकुमारी शोभा की शर्त के बारे में सुना। युवराज ने शोभा की सुन्दरता और विवेकशीलता के बारे में भी काफ़ी सुना और वे शोभा के साथ विवाह करने के लिए उत्सुक हो उठे।

श्याम सिंह

युवराज आनन्दवर्धन राजमहल में गये और महाराजा कल्याणवर्मा को अपना परिचय देकर आगमन का कारण भी बता दिया। राजा ने शोभा के पास सूचना भिजवादी और युवराज को बड़े आदर के साथ राजकुमारी के पास लेगये।

शोभा को देखते ही आनन्दवर्धन ने कहा, "यही मेरी पत्नी है।"

युवराज की बात सुनकर वहाँ उपस्थित सब लोग भौंचक्के रह गये।

आनन्दवर्धन ने राजा से कहा, "महाराज, आप आश्चर्य न कीजिए! मैंने कुछ दिन पूर्व एक मंदिर के पास आक्रमणकारी लुटेरों से राजकुमारी की रक्षा की थी। मेरे साहस पर आश्चर्यचकित हो राजकुमारी ने अपनी कृतज्ञता प्रकट की और वहीं हमने गंधर्व रीति से विवाह कर लिया।"

राजा कल्याणवर्मा ने शोभा से पूछा, "बेटी, क्या यह बात सच है?"

शोभा ने इस बात का कोई उत्तर नहीं दिया, पर उसने मन ही मन युवराज आनन्दवर्धन का अभिनन्दन किया।

शोभा का मौन देख युवराज आनन्दवर्धन ने राजा से कहा, "महाराज, आप देख रहे हैं न, लज्जा के कारण राजकुमारी के मुख पर ललिमा छा गयी है और वे कुछ बोल नहीं रही हैं। 'मौनं स्वीकृतिलक्षणम्' आज यह उक्ति चरितार्थ होगयी है। आप अब इतनी कृपा करें कि मेरी पत्नी को मेरे साथ विदा कर दें।"

यह अन्तिम बात सुनकर शोभा क्रुद्ध होकर बोली, "यह सब सफ़ेद झूठ है।"

शोभा का मौन भंग होते ही युवराज आनन्दवर्धन बड़ी ज़ोर से हँस पड़े। राजा कल्याणवर्मा आनन्दवर्धन की बुद्धिमत्ता एवं साहस पर प्रसन्न हुए और उन्होंने स्वीकृति के लिए अपनी पुत्री की ओर देखा।

शोभा के चेहरे पर मुस्कान थी। उसने अपना सिर झुका लिया। राजा कल्याणवर्मा ने बड़े वैभव के साथ अपनी इकलौती बेटी शोभा का विवाह युवराज आनन्दवर्धन के साथ कर दिया।

हमारे देश के स्मारक

चेंजी दुर्ग
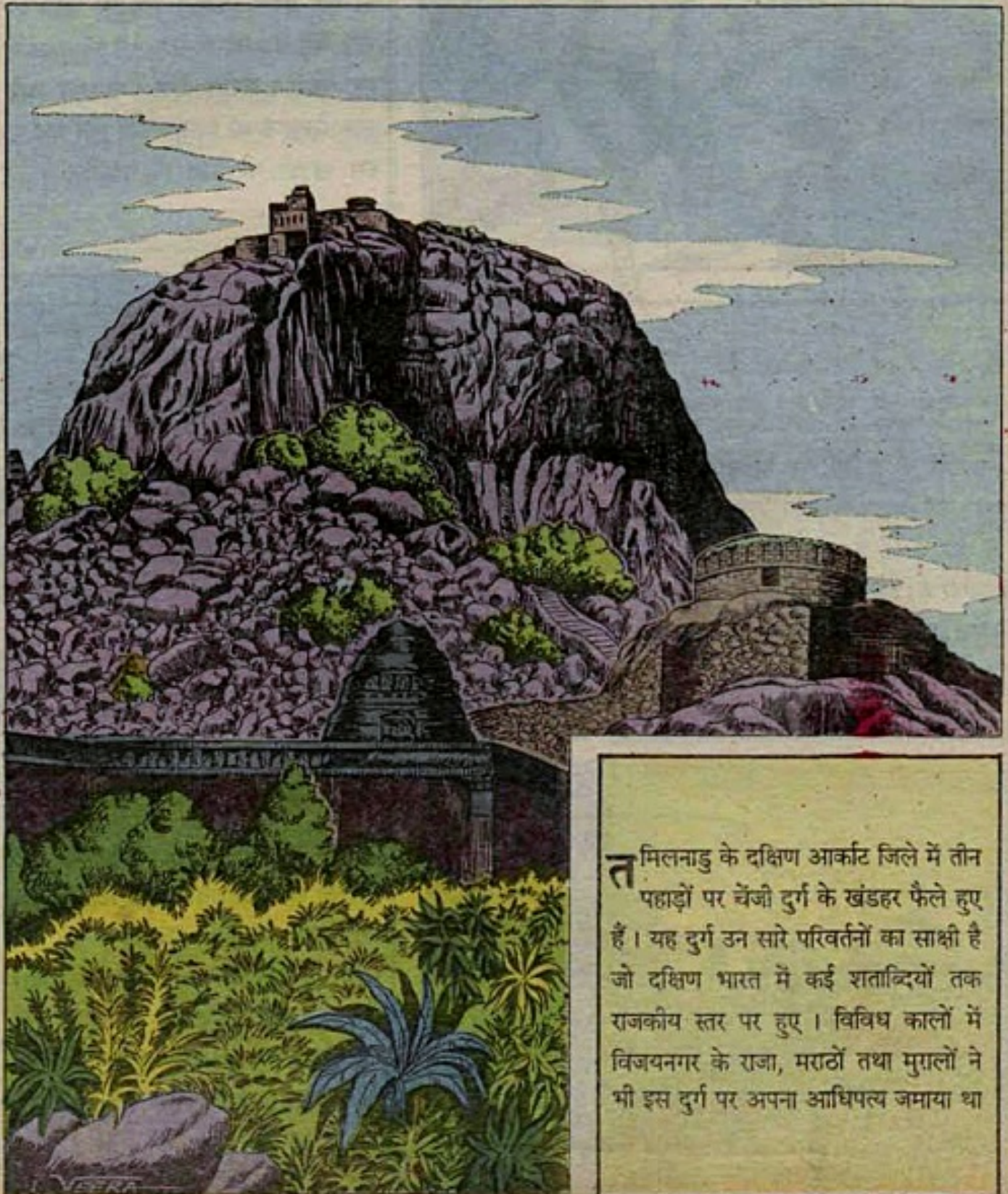
तमिलनाडु के दक्षिण आर्काट जिले में तीन पहाड़ों पर चेंजी दुर्ग के खंडहर फैले हुए हैं। यह दुर्ग उन सारे परिवर्तनों का साक्षी है जो दक्षिण भारत में कई शताब्दियों तक राजकीय स्तर पर हुए। विविध कालों में विजयनगर के राजा, मराठों तथा मुगलों ने भी इस दुर्ग पर अपना आधिपत्य जमाया था

एक दंतकथा है कि आनन्द कोस नाम का एक युवक चरवाहा जब इस पहाड़ पर गायें-भैंसें चरा रहा था, तब उसे एक गुफ़ा में गड़ा खज़ाना दिखाई दिया। तत्काल उसने कुछ नौजवानों को इकट्ठा किया और वहाँ से उस खज़ाने को उठा ले गया।

इसके कुछ वर्ष बाद आनन्दकोस ने आसपास के प्रदेशों पर अधिकार करके अपने को राजा घोषित कर दिया। यहाँ पर जो तीन पहाड़ हैं, उनमें से एक का नाम राजगिरि है। इस पहाड़ पर इस चरवाहा राजा ने एक सुन्दर महल का निर्माण भी करवाया।

आनन्दकोस ने इस महल को इतने सुरक्षित स्थान पर बनवाया कि वहाँ शत्रु का आगमन न हो सके। एक ऊँचे मार्ग और महल के बीच एक ख़ाई खुदवायी गयी। उस मार्ग एवं महल को जोड़ने के लिए लकड़ी का एक पुल बनवाया गया। ज़रूरत होने पर उस पुल को आसानी से हटाया भी जा सकता था।

चेंजी के शासक दूसरे राजाओं तथा सम्राटों के सामन्त राजा बनकर रहा करते थे। नायक राजाओं के शासन काल में यह दुर्ग और अधिक मज़बूत बनाया गया। फिर भी उनके काल में बीजापुर के सुलतान ने भारी सेना से इस दुर्ग पर घेरा डाला और नायक राजा को पराजित कर बीस करोड़ रुपये लूटकर ले गया।

इसके बाद महाराष्ट्र के महान वीर शिवाजी ने जब कर्नाटक पर आक्रमण किया, तब इस दुर्ग पर अपना अधिकार कर लिया। शिवाजी की मृत्यु के बाद मुग़लों ने इस दुर्ग को घेर लिया, पर वे इतनी आसानी से इस पर क़ब्जा नहीं कर पाये।

चेंजी दुर्ग को घेरने के लिए जब मुग़ल बादशाह ने आर्काट के नवाब को आदेश दिया, उस समय चेंजी पर बाईस वर्ष के एक युवक राजा तेजसिंह का शासन था। कहा जाता है कि जब युद्ध के पूर्व राजा तेजसिंह समीप के रंगनाथ मन्दिर में गया, तब वह देव मूर्ति दूसरी तरफ़ घूम गयी।

राजा तेजसिंह समझ गया कि युद्ध का परिणाम उसके अनुकूल न होगा, फिर भी उसने शत्रु का सामना किया और सात वर्ष तक साहसपूर्वक युद्ध करके अन्त में युद्धक्षेत्र में अपने प्राणों की आहुति दे दी। उसके मरणोपरान्त उसकी पत्नी ने अग्नि में प्रवेश करके अपने प्राण त्यागे।

इस राजा के साथ ही चेंजी दुर्ग का महान इतिहास समाप्त हो गया। वह शान और वैभव लुप्त होगये। फिर भी यह प्रदेश अपनी अनेक अद्‌भुत इमारतों के कारण आज भी पर्यटकों के आकर्षण का केंद्र बना हुआ है। इन इमारतों में मुख्य इमारत है कल्याण महल।
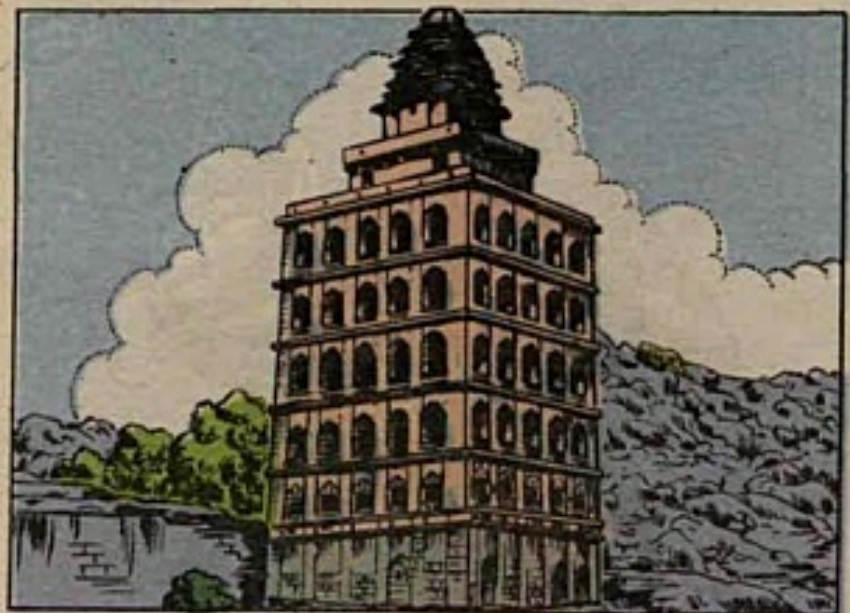
यहाँ छोटे कुएं जैसे गड्ढेवाली एक ऊँची चट्टान है, जिसे मृत्युशिखर कहकर पुकारते हैं। उन दिनों मृत्यु-दंड प्राप्त लोगों को उस गड्ढे में ढकेल दिया जाता था। आज भी उसी रूप में विद्यमान अश्वशाला इस बात का प्रमाण है कि चेंजी दुर्ग के शासक अश्वों के पालन और प्रशिक्षण पर कितना अधिक ध्यान देते थे।
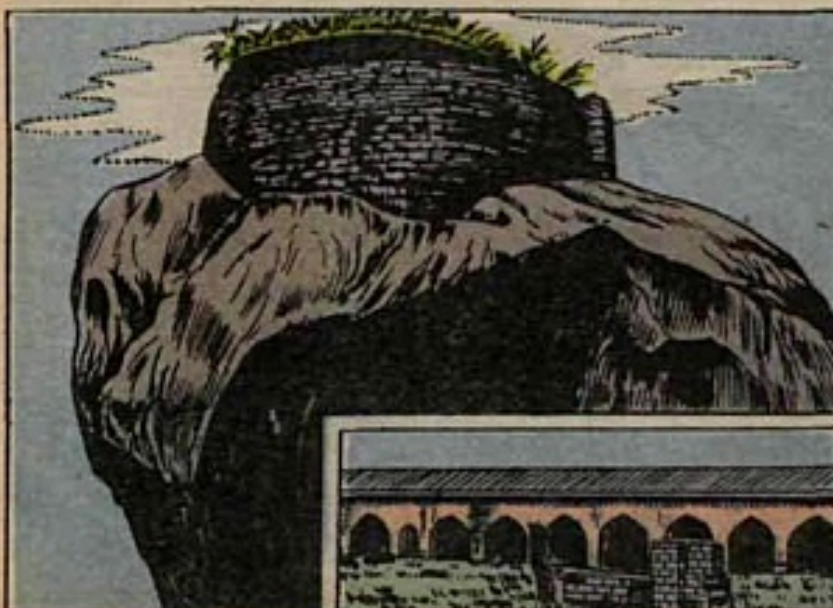
ससुरजी की शादी

जनगाँव का निवासी रामप्रसाद सेठ स्वभाव से अत्यन्त दयालु और उदार था। इस समय उसकी आयु साठ वर्ष थी। बेटों ने खूब फैले व्यापार को अच्छी तरह संभाल लिया था। कुछ वर्ष पूर्व रामप्रसाद की पत्नी का देहान्त होगया था।

एक दिन अचानक रामप्रसाद ने रिश्ते तय कराने वाले पंडित कृष्णशर्मा को बुलाकर कहा, "शर्माजी, मैं पुनः शादी करना चाहता हूँ। कन्या सुन्दर हो और पच्चीस वर्ष से अधिक न हो। आप पता लगाइये! मुझे दहेज की इच्छा नहीं है। बल्कि मैं कन्या के पिता को स्वयं कुछ धन देना चाहूँगा।"

सेठ रामप्रसाद के मुख से विवाह का विचार सुनकर कृष्णशर्मा मुँह बाये रह गये। जनगाँव के सभी लोग रामप्रसाद को धर्मात्मा और भद्रपुरुष मानते थे। ढलती उम्र में शादी की इच्छा पैदा होना, और वह भी एक ऐसे नेक पुरुष के अन्दर, यह सचमुच ही आश्चर्य का विषय था। कृष्णशर्मा ने इसे दुष्काल का प्रभाव जान अपने मन को समझा लिया।

उन्होंने रामप्रसाद की बात का उत्तर देते हुए कहा, "अच्छी बात है! मैं शीघ्र ही सब पता कर रिश्ते की बात चलाऊँगा।" यह कहकर कृष्णशर्मा चले गये।

जब रामप्रसाद और कृष्णशर्मा विवाह के बारे में बातचीत कर रहे थे, तब रामप्रसाद के बड़े बेटे शिवनाथ की बहू जयलक्ष्मी ने यह सारी चर्चा सुन ली। ससुर की शादी की बात सुनकर उसका दिमाग़ घूम उठा।

शाम को जब शिवनाथ घर लौटा तो पत्नी के मुख से यह सारा समाचार सुनकर वह कुछ देर चुप रहा, फिर बोला, "लक्ष्मी, माताजी का देहांत हुए कई वर्ष बीत गये हैं। पिताजी के मन में

गणेश त्रिपाठी

अचानक विवाह का विचार क्यों आया, यह मेरी समझ के बाहर है। पर एक बात निश्चित है। पिताजी जो भी संकल्प करते हैं, उसे वे अवश्य ही पूरा करते हैं। हम लोगों का बीच में पड़ना न तो उचित होगा न कारगर ही।"

इस घटना के दस दिन बाद कृष्ण शर्मा रामप्रसाद के पास आये और बोले, "सेठजी, आपके योग्य रिश्ता ढूंढ़ने में मैंने एड़ी-चोटी का दम लगा दिया है। सर्वसिद्धि नाम के गाँव में जानकीराम नाम का एक ग़रीब गृहस्थ है। वह अपनी कन्या गौरी के लिए दहेज न जुटा पाने के कारण उसका विवाह नहीं कर पा रहा है। गौरी के अलावा उसकी दो बेटियां और भी हैं। वह चिन्ता के कारण रात-दिन घुल रहा है।"

"तो पंडितजी, आपने जानकीराम से मेरी आयु और बाल-बच्चों के बारे में तो सब कुछ बता दिया है न?" रामप्रसाद ने पूछा।

"मैंने जानकीराम को सब कुछ बता दिया है। वह आपसे धन की आशा नहीं रखता, बस बिना दहेज बेटी का विवाह चाहता है। गौरी बाईस वर्ष की है। देखने में साक्षात् लक्ष्मी है।" कृष्णशर्मा ने कहा।

"अच्छी बात है! मैं उस कन्या को देखना चाहता हूँ। शुभ घड़ी निश्चित कीजिए!" रामप्रसाद ने कहा।

"कृष्णशर्मा ने पंचांग उलट-पलट कर कहा, "अगले गुरुवार को एकादशी है। यह मुहूर्त श्रेष्ठ है।"

रामप्रसाद पुनर्विवाह करने जारहे हैं, यह समाचार जनगाँव में आग की तरह फैल गया। उस दिन के बाद रामप्रसाद जब भी घर से बाहर निकलते, गाँव की औरतें कानाफूसी करने लगतीं और ताना देतीं— "देखो, नानाजी की शादी होने जारही है।"

पर रामप्रसाद के पुत्र शिवनाथ तथा बहू ने कोई प्रतिवाद नहीं किया। रामप्रसाद ने भी उनके सामने यह प्रसंग नहीं छेड़ा।

निश्चित तिथि गुरुवार के दिन कृष्णशर्मा रामप्रसाद के घर पहुँच गये। रामप्रसाद बन-ठनकर तैयार थे। उन्होंने अपने हाथ में एक थैली ली और कृष्णशर्मा के साथ सर्वसिद्धि गाँव की ओर चल पड़े।

जानकीराम ने रामप्रसाद का उचित स्वागत-सत्कार कर उन्हें गौरी को दिखाया। सचमुच ही गौरी लक्ष्मी जैसी थी।

रामप्रसाद ने कन्या देखकर जानकीराम से कहा, "जानकीरामजी, जब से मैंने विवाह का प्रस्ताव रखा है, तब से गाँव की औरतें लुक-छिपकर मुझ पर तानें कसने लगी हैं —कहती हैं 'यह तो नानाजी की शादी है।' मेरी पत्नी को यह संसार छोड़े कई वर्ष गुज़र गये हैं। अगर मुझे विवाह करना होता तो मैं कभी का कर लेता। वास्तव में, मैं पुनः शादी नहीं करना चाहता।"

रामप्रसाद की बात सुनकर जानकीराम का चेहरा उतर गया। वह दुखी होकर बोला, "मैंने सोचा था आप सज्जन पुरुष हैं। लेकिन आप तो हमारा अपमान करने आये हैं। कन्या को देखकर इनकार करना अपमान नहीं तो क्या है?"

रामप्रसाद ने शांत स्वर में कहा, "जानकीरामजी, आप आवेश में मत आइये! मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि यदि कोई बाप अपनी नवयुवती कन्या को मुझ जैसे बूढ़े के हाथ बाँधना चाहता है तो वह कितना मजबूर होगा। मैं ऐसे मुसीबतज़दा इन्सान का पता लगाना चाहता था, इसीलिए मैंने पं० कृष्णशर्मा को यह कष्ट दिया। वास्तव में, मेरा उद्देश्य विवाह करना नहीं, पर आपकी तरह तक़लीफ़ उठा रहे लोगों की सहायता करना है।" यह कहकर रामप्रसाद ने अपनी थैली खोलकर कुछ धनराशि बाहर निकाली।

तब रामप्रसाद ने कहा, "इस थैली में कुल बीस हज़ार रुपये हैं। मेरी पत्नी ग़रीब परिवार की

लड़की थी। फिर भी मेरे पिताजी ने दहेज के नाम पर उसके पिता से अच्छी रक़म वसूल की थी। मेरी पत्नी इस बात को कभी भूल नहीं सकी। उसी की प्रेरणा से मैंने दहेज में कुछ भी न स्वीकार कर अपने बेटे शिवनाथ का विवाह किया। यह बात पंडितजी भी अच्छी तरह जानते हैं।"

"हाँ, सेठजी! सारे गाँव के लोग आपकी उदारता और धर्मबुद्धि से परिचित हैं।" कृष्णशर्मा ने कहा।

"जानकीरामजी, अगर मेरे अन्दर थोड़ी-बहुत उदारता और धर्मबुद्धि है तो वह मुझे मेरी पत्नी की प्रेरणा से प्राप्त हुई है। मरने के पहले उसने अपनी चूड़ियां, चंद्रहार तथा कुछ आभूषण देकर यह अनुरोध किया था कि उन आभूषणों को बेचकर जो धन मुझे मिले, उसे मैं किसी ग़रीब माता-पिता की कन्या की शादी में खर्च करूँ, मैंने अपनी पत्नी की इच्छा का पालन कर उसके आभूषण बेच दिये और उस धन को व्यापार में लगाया। उस राशि से मैंने बीस हज़ार से भी अधिक रुपये कमाये। उसमें से आधा धन मैं गौरी के विवाह के लिए आपको देता हूँ। शेष धन से किसी और की सहायता करूँगा। मेरे इस कार्य से मेरी पत्नी की आत्मा को शांति मिलेगी और मुझे उसकी इच्छा की पूर्ति करने का आत्म संतोस भी होगा। इससे एक पंथ दो काज सिद्ध होंगे।" यह कहकर रामप्रसाद ने धन की वह थैली जानकीराम के हाथ में रख दी।

रामप्रसाद की यह उदारता और यह बड़प्पन देखकर जानकीराम और उसकी पत्नी की आँखें छलछला आयीं।

"जानकीरामजी, आप कोई योग्य वर ढूंढ़कर इस धन से अपनी कन्या का विवाह कर दीजिएगा। अच्छा, अब मैं चलता हूँ।" यह कहकर सेठ रामप्रसाद उठ खड़े हुए।

"रामप्रसाद जी, मैं इस जन्म में आपका ऋण नहीं चुका पाऊँगा।" जानकीराम ने रामप्रसाद के दोनों हाथ पकड़ लिये।

किवाड़ की ओट में खड़ी गौरी ने यह सारी बातचीत सुनी। वह अब आगे आयी और उसने श्रद्धापूर्वक रामप्रसाद के चरणों में प्रणाम किया।

उत्तर रामायण

महाराज रामचंद्र जब सभाभवन में विराजमान थे, तब भवन के बाहर एक कुत्ता भूँकने लगा।लक्ष्मण ने सहज ही समझ लिया कि कुत्ता राजा से कुछ शिकायत करना चाहता है। लक्ष्मण उस कुत्ते को सभाभवन में ले आये।

कुत्ते का सिर फूटा हुआ था। यह देख श्रीराम ने पूछा, "तुम निडर होकर बताओ, तुम्हें किसने कष्ट दिया है?"

"महाराज, सर्वार्थसिद्धि नाम के एक भिक्षु ने मेरा सिर फोड़ा है।" कुत्ते ने कहा।

राजा राम ने तुरन्त उस भिक्षु को राजसभा में उपस्थित होने का आदेश दिया। भिक्षु के आने पर श्रीराम ने पूछा, "तुमने इस कुत्ते का सिर क्यों फोड़ा है?"

"महाराज, मैं भिक्षा की खोज में दर-दर भटक रहा था, पर मुझे कहीं भिक्षा नहीं मिली। उस समय यह कुत्ता मेरा रास्ता रोक कर खड़ा होगया। मैंने इसे भगाने का भरसक प्रयत्न किया, पर यह अपनी जगह से नहीं हिला। तब मैं अपने क्रोध पर नियंत्रण नहीं कर सका और मैंने गुस्से में आकर इसका सिर फोड़ दिया। आप इस अपराध के लिए मुझे जो भी दंड देना उचित समझें, दें।" भिक्षु सर्वार्थसिद्धि ने कहा।

महाराजा राम ने अपने सभासदों से पूछा, "भिक्षु को क्या दंड दिया जाये?" सभा में अनेक पंडित उपस्थित थे, पर कोई भी समुचित उत्तर न दे सका।

तब कुत्ते ने श्रीराम से कहा, "महाराज, इस भिक्षु को मेरे सुझाव के अनुसार दंड दीजिए! इसे कालंचर में कुलपति के पद पर नियुक्त कर

१०. कुश - लव का जन्म

और ब्राह्मणों की पूजा की। फिर भी, उस पद में अवश्य कोई दोष होना चाहिए कि मुझे यह नीच जन्म प्राप्त हुआ है। अत्यन्त क्रोधी एवं दयाविहीन यह भिक्षु अगर उस पद पर काम करेंगे तो अनेक जन्मों तक इन्हें अधम योनियां प्राप्त होंगी और कष्ट मिलेगा।'' यह कहकर वह कुत्ता वहाँ से चला गया।

इसके कुछ दिन बाद की घटना है। एक उल्लू और एक चील आपस में लड़ पड़े और फैसले के लिह श्रीरामचंद्र के पास आये। उनके झगड़े का कारण था किसी उद्यान का एक घर। जिसे वे दोनों अपना बताकर झगड़ा कर रहे थे।

उनके झगड़े का निर्णय करने के लिए श्रीराम पुष्पक विमान पर अपने मंत्रियों के साथ आरूढ़ होकर उद्यान में स्थित उस घर के पास पहुँचे।

''तुमने इस गृह का निर्माण कब किया ?'' श्रीराम ने चील से पूछा।

''इस पृथ्वी पर जब मानव प्राणी पैदा हुए, तभी मैंने यह गृह बनाया था। यह गृह मेरा है।'' चील ने उत्तर दिया।

उल्लू तुरन्त बोला, ''महाराज, पृथ्वी पर जब पेड़ उगे, तभी मैंने यह मकान बनाया था, इसलिए वास्तव में यह मेरा घर है।''

तब श्रीराम ने मंत्रियों से परामर्श कर अपना निर्णय दिया, ''यह गृह उल्लू का है। सृष्टि में सर्वप्रथम वृक्ष और वनस्पति जगत उत्पन्न हुआ था। चील उल्लू के घर को हड़पना चाहती है, इसलिए वह दंड की पात्र है।'' राम ने अभी

दीजिए!''

महाराजा राम ने सर्वार्थसिद्धि को कालंचर के कुलपति पद पर नियुक्त कर दिया और हाथी पर बिठाकर उसे विदा किया। भिक्षु दंड के रूप में कुलपति पद पाकर परम आनन्दित हुआ।

इसके बाद श्रीराम ने अपने सभासदों की जिज्ञासा को शांत करने के विचार से कुत्ते से पूछा, ''तुमने सर्वार्थसिद्धि भिक्षु को दंड के रूप में कुलपति-पद पर नियुक्त करने का आग्रह क्यों किया ?''

''महाराज, मैंने पिछले जन्म में यही कार्य किया था। उस पद पर रहने के कारण मुझे उत्तम भोजन, दास-दासियां और सारी सुविधाएँ प्राप्त थीं। प्राणीमात्र के प्रति दया भाव रखने के कारण मैं विनयशील और आदर्श व्यक्ति कहलाया। देव

अपना वाक्य समाप्त ही किया था कि उन्हें यह आकाशवाणी सुनाई दी :

"हे राम ! यह चील पहले ही शापग्रस्त है। पहले ही दंड भुगत रही इस चील को अब आप पुनः क्यों दंडित करना चाहते हैं ? पहले ब्रह्मदत्त नाम का एक राजा हुआ। वह अत्यन्त धनवान, शूर और सत्यव्रती था। एक बार इस राजा के भवन में गौतम मुनि का आगमन हुआ। राजा ने गौतम मुनि का यथोचित अतिथि - सत्कार किया। राजा प्रतिदिन गौतममुनि को स्वयं पादोदक देते। इस प्रकार वे यथोचित सम्मान से राजा ब्रह्मदत्त के यहाँ कुछ काल रहे। एक दिन भूल से गौतम मुनि के भोजन में मांस का टुकड़ा आगया। अशुचि भोजन देखकर गौतम कुपित हो उठे और उन्होंने महाराजा ब्रह्मदत्त को शाप दिया कि वह चील बन जाये। राजा के प्रार्थना करने पर मुनि ने कहा, "भविष्य में इक्ष्वाकुवंश में रामचंद्र का जन्म होगा। जब वे तेरा स्पर्श करेंगे, तब तू शाप-मुक्त हो जायेगा।"

आकाशवाणी सुनकर श्रीराम ने चील का स्पर्श किया। चील तत्क्षण एक दिव्य पुरुष के रूप में परिवर्तित होगयी। वह पुरुष राम के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट कर वहाँ से चला गया।

एक बार यमुना-तट के निवासी तपस्वीजन श्रीराम के दर्शन करने आये। वे संख्या में सौ से भी अधिक थे। वे कलशों में पवित्र जल लाये थे और उनके हाथों में फल थे। श्रीराम ने उनकी भेट को स्वीकार किया, फिर उन्हें आसनों पर बैठने का निवेदन कर उनके आगमन का कारण पूछा। तपस्वियों ने निवेदन किया कि एक लवणासुर नाम का राक्षस उन्हें सताता है। वे उन्हें उसके त्रास से मुक्ति दिलायें।

लवणासुर महान शक्तिशाली असुर मधु का पुत्र था। मधु ने रुद्र को लक्ष्य बनाकर घोर तपस्या की थी। रुद्र ने प्रसन्न होकर अपने त्रिशूल में से एक और त्रिशूल का निर्माण किया था और उसे मधु को देकर कहा था, "जब तक यह त्रिशूल तुम्हारे पास रहेगा, तुम्हें कोई पराजित नहीं कर सकता।" मधु ने भगवान शिव से निवेदन किया था कि यह त्रिशूल परम्परागत रूप से उसके वंश में बना रहे।

"मधु, तुम्हारे बाद यह त्रिशूल तुम्हारे पुत्र को

प्राप्त होगा, इसके बाद इसका लोप हो जायेगा।'' भगवान शिव ने कहा।

मधु ने रावण की रिश्ते की बहन कुंभीनस के साथ विवाह किया था। मधु और कुंभीनस के पुत्र का नाम ही लवण था। वह बालपन से ही बड़ा दुष्ट और अत्याचारी था। मधु ने उसे नियंत्रण में रखने के लिए बहुत कुछ किया, पर वह असफल रहा। एक बार मधु वरुण लोक को जा रहा था, तब वह भगवान शिव के रुद्र रूप से प्राप्त त्रिशूल को लवण को देकर चला गया।

त्रिशूल की अद्‌भुत शक्ति से सम्पन्न होकर लवण अत्यन्त उच्छंखृल होकर सबको सन्ताप देने लगा। वह मुनियों को नाना पीड़ाएं पहुंचाने लगा। तब तपस्वी मुनि श्रीराम के पास आये।

मुनियों की विनती सुनकर श्रीराम ने उनसे कहा, ''मैं अवश्य ही लवणासुर के संकट को काटूँगा। आप निर्भय और निश्चिन्त रहें!''

इसप्रकार मुनियों को अभयदान देकर श्रीराम अपने भाइयों की ओर उन्मुख होकर बोले, ''तुम तीनों में से कौन लवणासुर का संहार करने के लिए उसके साथ घोर संग्राम का इच्छुक है?''

भरत ने यह कार्य संपन्न करने का आश्वासन दिया, पर शत्रुघ्न ने स्वयं इस युद्ध की इच्छा प्रकट की और दृढ़ स्वर में कहा, ''अग्रज श्रीराम, मैं स्वयं उस असुर का संहार करूँगा। मैं इस कार्य के लिए स्वयं जाना चाहता हूँ।''

महाराजा राम ने शत्रुघ्न की इच्छा स्वीकार कर ली और मधुपुर के राजा के रूप में उनके अभिषेक के प्रबन्ध का आदेश दिया। रीति यह थी कि राजा की मृत्यु होने के बाद राज्य-सिंहासन रिक्त नहीं रहना चाहिए। शत्रुघ्न का राज्याभिषेक समाप्त होते ही महाराजा राम ने उनके हाथ में एक बाण दिया और समझाया— ''वत्स शत्रुघ्न, इस बाण ने मधु-कैटभजैसे दैत्यों का संहार किया है। मैंने रावण पर भी इस बाण का प्रयोग नहीं किया था। तुम इस बाण को लवणासुर के वध के लिए प्रयुक्त करना! पर, एक बात याद रखना, लवणासुर के पास भगवान शिव के त्रिशूल का ही अंशभूत एक त्रिशूल है। जब तक वह त्रिशूल उसके हाथ में होगा, कोई भी उसे पराजित नहीं कर सकता। इसलिए तुम्हें एक उपाय करना होगा— लवणासुर का त्रिशूल उसके भवन में

रहता है । जब वह कभी नगर को छोड़ बाहर जाये, तब तुम उसके नगर को घेर लेना । जब वह वापस लौटे, तब तुम उसे द्वार के पास ही रोक लेना और वहीं उसका वध कर डालना । याद रखना, वह किसी भी हालत में नगर के भीतर प्रवेश न कर पाये । त्रिशूल उसके हाथ नहीं लगना चाहिए, यही तुम्हारी विजय का रहस्य है ।''

इसके बाद श्रीराम ने फिर कहा, ''शत्रुघ्न, इतना ही नहीं, पहले तुम अपनी सेना को भेजो, इसके बाद तुम अकेले जाओ ! सावधान ! लवणासुर को इस बात का बिलकुल पता न लगना चाहिए कि उसका वध करने के लिए कोई आ रहा है । सेनाएँ ग्रीष्म ऋतु में ही गंगा पार करें और पड़ाव डालें । इसके बाद वर्षाकाल का आरंभ होते ही तुम अपने शस्त्रास्त्रों के साथ यह बाण लेकर निकलना और तब मधुपुरी को घेरकर बाहर से आये लवणासुर का संहार करना !'' इसप्रकार श्रीराम ने लवणासुर के साथ शत्रुघ्न की युद्धनीति को स्पष्ट कर दिया ।

राम के आदेशानुसार शत्रुघ्न ने सारी योजना को कार्यान्वित किया । पहले सेना गयी, फिर वर्षा प्रारंभ होते ही शत्रुघ्न ने प्रस्थान किया । रास्ते में कुमार शत्रुघ्न दो दिन के लिए वाल्मीकि मुनि के आश्रम में ठहर गये । वाल्मीकि ने उनका अतिथि-सत्कार किया और बताया कि किसी काल में यह आश्रम रघुवंश का ही था । उन्होंने सत्संग के बीच शत्रुघ्न को इसकी कथा सुनायी :

किसी समय रघुवंश में सुदास नाम का एक राजा हुआ । उसके पुत्र का नाम था वीरसह । वीरसह छोटी उम्र में ही अनेक साहसपूर्ण कार्यों के लिए प्रसिद्ध होगया था । एक बार वह बन में शिकार खेलने के लिए गया । वहाँ उसने दो राक्षसों को स्वच्छन्द विचरण करते हुए देखा । उन राक्षसों ने दो बाघों का रूप धर लिया और जो भी जन्तु उनकी आँखों के सामने पड़ता, वे उसे मारकर खा जाते । परिणामस्वरूप बन में किसी जन्तु का निशान भी शेष नहीं रहा था । यह देख वीरसह को बड़ा क्रोध आया । उसने उन राक्षसों को देखा तो तत्काल ही एक का वध कर दिया । यह देख दूसरा राक्षस क्रोध में भरकर बोला, ''पापी, तुमने अकारण ही मेरे साथी को मारा है ।

याद रखना, एक दिन मैं अवश्य ही इसका प्रतिशोध लूँगा।" यह कहकर वह अदृश्य होगया।

कुछ दिन और बीत गये। वीरसह ने राजा होने के बाद इस आश्रम में एक महान अश्वमेध यज्ञ किया। वशिष्ठ ने इस यज्ञ को संपन्न करवाया। यज्ञ समाप्त होने के बाद वह दूसरा राक्षस महर्षि वशिष्ठ का रूप धारण कर आया और प्रतिशोध की भावना से राजा से बोला, "राजन, अब यज्ञ समाप्त होगया है। मुझे सुस्वादु मांसयुक्त भोजन कराओ!"

गुरु के इस आदेश से राजा अत्यन्त प्रसन्न हुआ। उसने अपने विशिष्ट रसोइये को बुलाकर आदेश दिया, "गुरुदेव के लिए हविष के मांस से युक्त स्वादिष्ट भोजन का पाक करो!"

इस बीच राक्षस ने रसोइये का रूप धर लिया और नर मांस के मिश्रण से भोजन तैयार किया। उसने अनेक व्यंजनों युक्त भोजन को राजा को दिखाकर कहा, "महाराज, मैंने हविष के मांस के साथ उत्तम भोजन तैयार किया है।"

राजा ने अपनी पत्नी रानी मदयन्ती के हाथों से महर्षि वशिष्ठ को नरमांस परोसवा दिया। वशिष्ठ ने तत्काल पहचान लिया कि उन्हें नरमांस परोसा गया है। वे क्रुद्ध हो उठ खड़े हुए और राजा को शाप दिया, "तुम नरभक्षक बन जाओ!"

राजा को भी क्रोध आगया। उसने भी वशिष्ठ को शाप देने के लिए हाथ में जल ले लिया। पर रानी मदयंती ने राजा को रोक लिया और कहा, "महाराज, महर्षि वशिष्ठ हमारे लिए देवतातुल्य हैं। आप इन्हें शाप देकर धर्म का नाश न करें!" तब राजा ने शाप के लिए हाथ लिए गये उस जल को अपने पैरों पर ही गिरा लिया। उस जल के कारण राजा के पैरों पर कल्मष लग गया। तब से वह कल्मषपाद कहलाने लगा।

जब वशिष्ठ को सारी वास्तविक घटना का पता लगा तो उन्होंने अपने दिये शाप को न्यूनतर करने का अनुग्रह दिखाया और ऐसा कर दिया कि कल्मषपाद को शाप का फल केवल बारह वर्ष ही भोगना पड़े।

राजा ने बारह वर्ष तक नरभक्षक के रूप में अपना जीवन बिताया और शाप से मुक्त होकर पूर्ववत् मानव रूप धारण कर राजा का कार्यभार सँभालने लगा।

वाल्मीकि ने अंत में कहा कि उस रघुवंशी राजा ने इसी आश्रम में अश्वमेध यज्ञ संपन्न किया था, अतः यह रघुवंशियों का आश्रम ही है।

वाल्मीकि के मुख से यह वार्ता सुनने के बाद शत्रुघ्न अपनी पर्णशाला में गये।

उसी रात सीता ने जुड़वाँ पुत्रों को जन्म दिया। मुनिकुमारों के मुख से यह समाचार सुनकर वाल्मीकि मुनि सीता के पास गये और बालचंद्रों की भाँति प्रकाशित होनेवाले दोनों बच्चों को देखा। वाल्मीकि ने उन्हें रक्षा सूत्र बाँधा और फिर बड़े बालक का नाम कुश और छोटे का लव नामकरण किया।

जब शत्रुघ्न को इस घटना का समाचार मिला तो वे सीता के पास गये और अत्यन्त नम्र होकर बोले, "भाभी, यह सब प्रारब्ध का खेल है।"

दूसरे दिन शत्रुघ्न ने वाल्मीकि मुनि से विदा ली और पश्चिम दिशा में प्रयाण किया। वे सात दिन बाद यमुना-तट पर पहुँचे और वहाँ मुनियों के आश्रम में वह रात बितायी।

दूसरे दिन सुबह होते ही शत्रुघ्न ने च्यवन ऋषि के दर्शन किये और उनसे लवणासुर और उसके त्रिशूल के बारे में पूछा। च्यवन ऋषि ने बताया कि लवणासुर ने उस त्रिशूल के बल पर अनेक दारुण कृत्य किये हैं। इस संदर्भ में उन्होंने मांधाता की कहानी सुनायी :

महाराजा युवनाश्व के पुत्र मांधाता अत्यन्त बलवान, शूरवीर और पराक्रमी थे। एक बार उन्होंने पृथ्वी के समस्त राजाओं को पराजित किया और स्वर्ग पर आक्रमण करके उस पर भी विजय प्राप्त करनी चाही। मांधाता के मंतव्य को
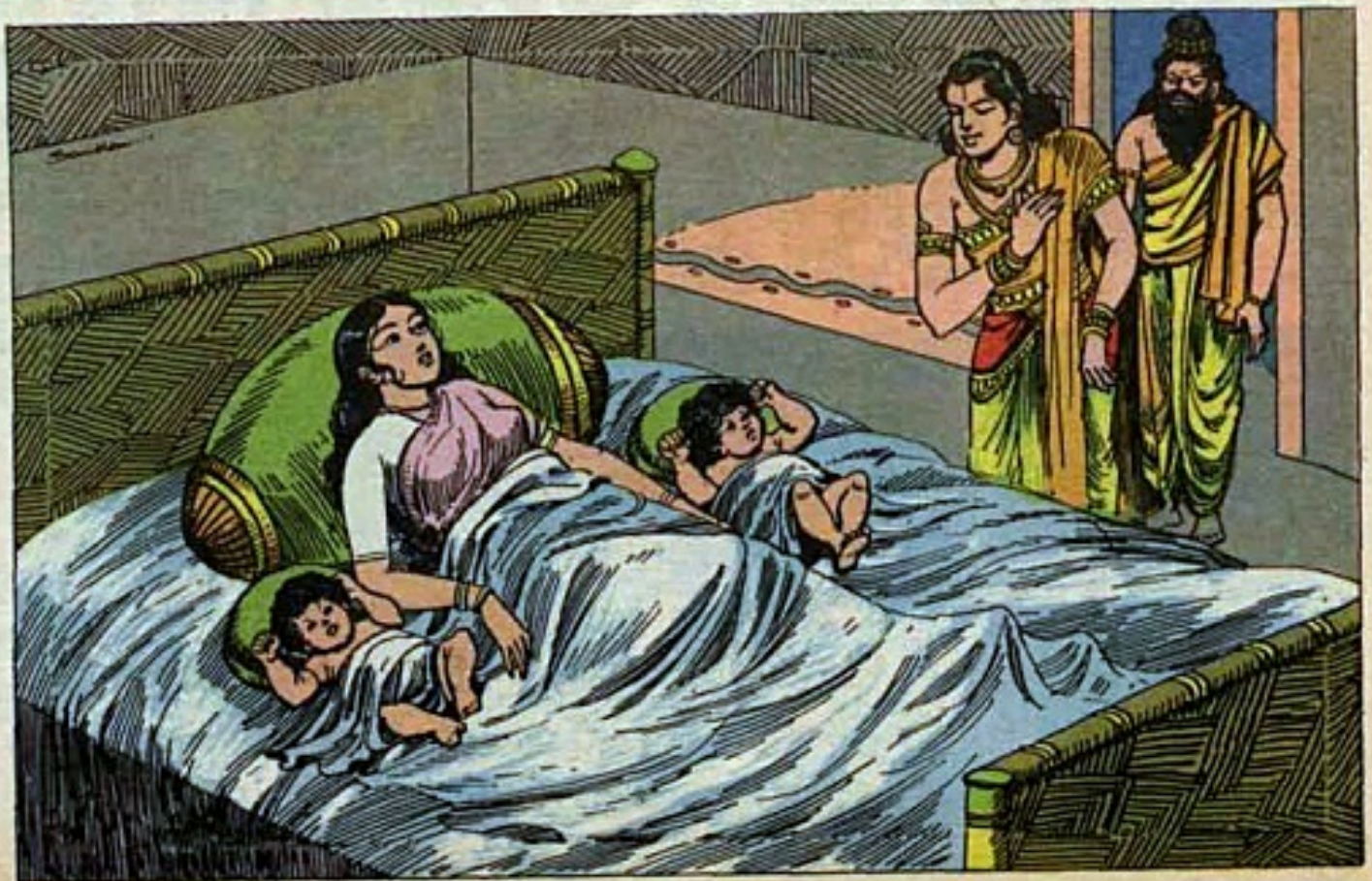
जानकर इंद्रादि देवता भयभीत होगये। मांधाता इंद्र का अर्धासन प्राप्त करना चाहते थे और देवताओं से अपनी सेवा करना चाहते थे। इस निर्णय के साथ जब मांधाता स्वर्ग में पहुँचे तो इंद्र ने नम्र शब्दों में मांधाता से कहा, "राजन, पहले आप समस्त पृथ्वी को विजित करें, तब यहाँ आयें। मैं आपको स्वयं अपने हाथों देवलोक सौंप दूँगा।"

"देवराज, आप यह क्या कहते हैं? मैंने यहाँ आने के पूर्व समस्त भूलोक पर विजय प्राप्त कर ली है। इस समय पृथ्वी पर मेरे शासन का तिरस्कार करनेवाला कोई नहीं है।" मांधाता ने कहा।

"मधुवन में लवणासुर नाम का एक राक्षस है। क्या वह आपके द्वारा शासित है? क्या वह आपका आज्ञाकारी है?" इंद्र ने पूछा।

इंद्र की बात सुनकर मांधाता ने लज्जित होकर सिर झुका लिया। वे पृथ्वी लोक को लौट आये। उन्होंने लवणासुर को पराजित करने के लिए अपने शूरवीर सैन्यदल को साथ लिया और मधुवन की ओर चल पड़े। राजा मांधाता ने दूत के द्वारा लवणासुर के पास सन्देशा भेजा कि वह उनकी अधीनता स्वीकार करे। पर लवणासुर ने उस दूतका अपमान और उसको पकड़कर उसका भक्षण कर लिया।

बहुत काल तक दूत को न लौटता देख मांधाता को आश्चर्य हुआ। अंत में उसने युद्ध करना उचित समझा। तब मांधाता ने लवणासुर के साथ युद्ध छेड़ दिया। लवणासुर मांधाता को देखकर हँस पड़ा और उसने उन पर अपने त्रिशूल का प्रयोग किया। त्रिशूल ने मांधाता के साथ उसकी सारी सेना को भस्म कर डाला।

च्यवन ऋषि ने मांधाता की कहानी सुनाने के बाद शत्रुघ्न से कहा, "शत्रुघ्न, तुम केवल उस समय लवणासुर का वध कर सकते हो, जब उसके हाथ में त्रिशूल न हो। तुम कल ही यह महान कार्य कर सकते हो।"

वह रात उस आश्रम में सत्संग— वार्तालाप के बीच व्यतीत होगयी।

लकड़ी की तलवार

हंगरी सैनिकों को हुजार कहा जाता है। यदि कोई मनुष्य एक बार सेना में भर्ती हो जाता है, अर्थात् हुजार बन जाता है तो उसे बारह वर्ष तक अनिवार्य रूप से राजा की सेवा करनी पड़ती है।

मैथ्यूस जब हंगरी का राजा बना तो उसे यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि उसके सैनिक हमेशा नशे में रहते हैं। हुजार सैनिक को प्रति सप्ताह केवल चार सिक्के वेतन के रूप में मिलते थे। इतने कम वेतन में वे कैसे शराब पिये रहते हैं, यह बात मैथ्यूस की समझ में नहीं आयी। राजा ने सेना नायकों से इस बारे में जानकारी हासिल करनी चाही, तो वे भी कोई उत्तर नहीं दे सके।

राजा ने यह रहस्य जानने के लिए एक योजना बनायी। उसने हुजार की पोशाक धारण की और जेब में चार सिक्के डालकर साधारण सैनिक की भाँति मनोरंजन करने के लिए निकल पड़ा। वह शाम के समय नगर के बाहर के एक शराबख़ाने पर पहुँचा।

राजा अभी शराबघर तक पहुँचा ही था कि अन्दर से हँसी-ठट्ठे और शोरगुल की आवाज़ें सुनाई दीं। राजा ने सोचा कि इन चार सिक्कों को आजमाने का यही उचित स्थान है और संभवतः हुज़ारों की शराब का रहस्य भी इसी स्थान से पता लग सकता है— यह सोचकर वह अन्दर घुसा।

शराबघर के अन्दर चार हुजार थे। जब उन्होंने एक नये हुजार को आते देखा तो उनमें से एक ने उसका कान पकड़कर पूछा, "अरे नौजवान, तू फौज़ में कब भर्ती हुआ?"

"एक सप्ताह पहले!" राजा ने उत्तर दिया।

पुराने हुजार ने राजा के कंधे पर थपकी देकर पूछा, "इसका मतलब है दोस्त, कि तुम्हें बारह वर्ष तक कष्ट झेलने हैं। पर इस समय तुम इसकी चिन्ता मत करो! दो सिक्कों की ब्रांडी ख़रीद लो!

उदयशंकर

मौज उड़ायेंगे ।''

''मेरे पास पैसे नहीं हैं । हम अत्यन्त ग़रीब हैं ।'' राजा ने उत्तर दिया ।

''पर तुम्हें कल वेतन मिल गया होगा ! तुम्हें कम से कम एक सिक्के की शराब तो मुझे पिलानी ही होगी । इससे तुम बच नहीं सकते, ग़रीब हो या अमीर !'' हुजार ने कहा ।

राजा को विवश होकर उस हुजार को शराब पिलानी ही पड़ी । तब बाक़ी तीनों हुजार भी राजा के पीछे पड़ गये और उन्होंने भी राजा को मजबूर कर शराब पी ली । इस प्रकार चारों हुजारों ने एक-एक सिक्के की शराब पी ली । राजा की जेब ख़ाली होगयी ।

इतने से भी वे हुजार संतुष्ट नहीं हुए । उनमें से योश्का नाम का हुजार उठा और दूकानदार के पास जाकर बोला, ''मुझे एक सिक्के की शराब उधार दे दो ।''

शराबघर के मालिक ने साफ़ कह दिया कि वह हुजारों को उधार नहीं देता ।

योश्का ने मालिक को गालियाँ दीं, फिर नरम होकर बोला, ''तुम चाहो तो मेरी तलवार गिरवी रख लो !'' शराबघर के मालिक ने उसकी तलवार गिरवी रख ली और सब हुजारों को थोड़ी-थोड़ी शराब देकर दूकान बंद कर दी ।

उस समय रात के नौ बजे थे । सारे हुजार दूकान से बाहर आगये ।

इतने पर भी उनकी करतूत बन्द नहीं हुई । उस शराबघर के नीचे भूगर्भ में खाने के पदार्थ और शराब के पीपे रहते थे । कुछ ही दिन पहले हुजारों ने वहाँ सेंध लगाकर सारा सामान लूट लिया था । सेंध का वह स्थान अब भी मज़बूत नहीं था । उन हुजारों ने सेंध के उस स्थान को ढूंढ़ निकाला और राजा से कहा कि वह उस रास्ते से घुसकर खाने की सामग्री और शराब ले आये । राजा ने आना कानी की तो वे उसे मार डालने की धमकी देने लगे । राजा को स्वीकार करना पड़ा । हुजार साहस और क्रूरता के लिए मशहूर थे ।

तहखाने से चुरायी गयी खाद्य सामग्री और शराब को डकार कर हुजार अपने डेरों पर चले गये । ये हुजार अपने निश्चित समय से बहुत बाद में गये थे, पर गश्त लगाने वाले संतरियों ने उन्हें नहीं रोका । वे अपने डेरों में पहुँच गये ।

पुराने हुज़ारों के सोने के लिए बिस्तर थे, पर राजा के पास कोई बिस्तर नहीं था। योश्का ने फ़र्श पर एक कम्बल बिछा दिया और राजा से सोने को कहा।

रात बीतने लगी पर राजा मैथ्यूस को नींद नहीं आयी। उसका क्रोध बढ़ता जा रहा था। ये दुष्ट हुज़ार इस तरह का अनैतिक जीवन जीते हैं। अपने पैसों की शराब पीकर फिर दूसरों के पैसे हड़पते हैं। इतना ही नहीं, चोरी जैसे धंधे भी करते हैं। राजा ने उनके लिए यह सब किया, गालियाँ भी सुनीं। इन सब बातों को ध्यान में रखकर राजा ने सोचा कि सबसे पहले योश्का को सबक़ सिखाना होगा, जिसने अपनी तलवार तक गिरवी रख दी जो कि राज्य की संपत्ति है। राजा आधीरात बीतने के बाद चुपचाप अपने महल को लौट आया।

सुबह होते ही राजा की ओर से यह संदेश मिला कि सभी हुज़ार अपने अपने शस्त्रों के साथ परेड में शामिल हों। राजा अपनी सेना का निरीक्षण करेंगे। सभी हुज़ारों ने अपनी तलवारों को म्यान में रखकर उन्हें कमर पर लटका लिया। योश्का के पास तो तलवार थी नहीं, वह सबसे विनती करने लगा कि कोई उसे अपनी तलवार दे दे। पर किसी के पास अधिक तलवार नहीं थी। अखिर उसने एक बढ़ई की खुशामद की और लकड़ी की एक तलवार बनवाकर अपनी म्यान में रख ली। योश्का भी अन्य सब हुज़ारों के साथ परेड पर पहुँचा।

परेड में राजा ने उन चारों हुज़ारों को पहचान लिया। राजा यह परीक्षा लेना चाहता था कि

योश्का के पास तलवार है या नहीं। योश्का की कमर में म्यान तो नज़र आ रही थी, पर म्यान ख़ाली भी हो सकती थी। राजा योश्का को तभी दंड दे सकता था, जबकि उसकी म्यान में तलवार न हो।

उन्हीं दिनों एक अन्य हुजार कारागार में बंद था। उसे किसी गंभीर अपराध के कारण मृत्यु दंड मिला था। राजा ने उस बन्दी हुजार को उपस्थित करने का आदेश दिया। राजसेवक उस हुजार को राजा के सामने ले आये।

राजा ने योश्का को आगे आने का और उस बन्दी हुजार का सिर काटने का आदेश दिया।

राजा का आदेश सुनकर योश्का के हाथ-पैर काँप गये। लकड़ी की तलवार से किसी का सिर कैसे काटा जा सकता था? योश्का ने अत्यन्त दयनीय स्वर में कहा, "महाराज, युध्द के अलावा अन्य कहीं रक्त बहाना मेरे नियम के विरुध्द है। मैं आपकी' आज्ञा न मानने की विवशता के कारण चार वर्ष अधिक सैनिक-पद पर काम करने के लिए तैयार हूँ। पर आप मुझे इस हुजार का सिर काटने का भार न सौंपें।"

राजा मैथ्यूस ने क्रुद्ध होकर पूछा, "क्या तुमने मेरा आदेश नहीं सुना?"

"महाराज, यदि आपका आदेश पालन करना ही है तो मैं कुछ क्षणों के लिए भगवान से प्रार्थना करना चाहूँगा।"

राजा मैथ्यूस ने अपनी अनुमति दे दी।

योश्का ने गहरी साँस लेकर आसमान की तरफ ताका, फिर कहा, "हे भगवान, हुजार पर दया करो! मैं इस हुजार के प्राण नहीं लेना चाहता, इसलिए मेरी इस लोहे की तलवार को लकड़ी की तलवार बना दो!"

यह कहकर योश्का ने तुरन्त म्यान से लकडी की तलवार खींच ली और फिर राजा से कहा, "आप देख रहे हैं न, महाराज! भगवान ने मेरी प्रार्थना सुन ली है।"

राजा को हँसी आगयी। उसने मन ही मन योश्का की युक्ति की प्रशंसा की और उसे दंड देने का विचार त्याग दिया।

बुरा-भला
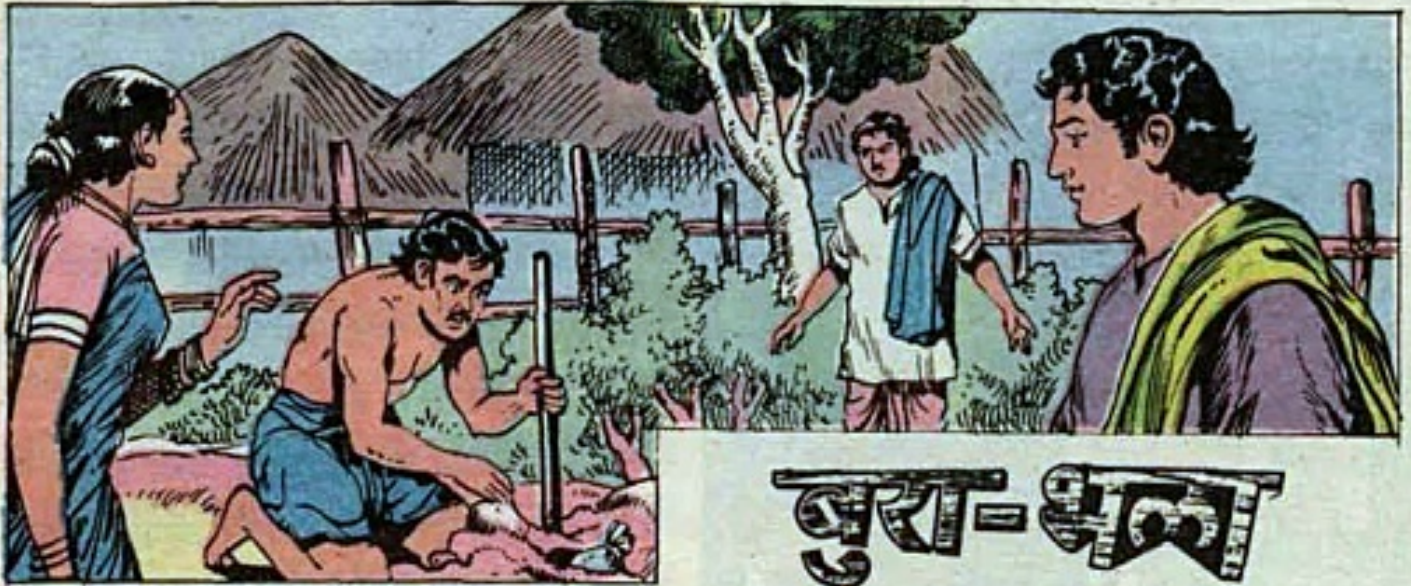
[५]

शतनंदन गाँव के उन दोनों बुजुर्गों रामधन और श्यामधन ने समझाया कि परदेसी राजदीप अत्यन्त ख़तरनाक मांत्रिक है और उसके द्वारा किया गया कोई भी उपकार हमारे लिए अनिष्टकर है। अगले ही दिन गाँव में एक घटना हुई। श्रीनिवास नाम के एक गृहस्थ के घर उसकी पत्नी विमला के गहने चोरी होगये। विमला एक कपड़े में गहने बाँधकर रख गयी थी और नदी में नहाने चली गयी थी। लौटकर देखा, तो गहनों की पोटली गायब थी।

यह ख़बर मिलते ही राजदीप श्रीनिवास के घर पहुँचा। उसने सारी बात बड़े ध्यान से सुनी और सारा घर तलाश करने लगा। तभी उसे एक कोने में सेंध दिखाई दी। उसने श्रीनिवास से कहा कि इसमें गहनों की पोटली ढूंढे। वह सेंध घूंसों से तोड़ी गयी थी। श्रीनिवास ने उस स्थान पर खोदकर देखा, वहाँ गहनों की पोटली उसे मिल गयी।

राजदीप के द्वारा हुए इस हित-कार्य के बदले में श्रीनिवास को उसे बीस कोड़े लगाने थे, पर श्रीनिवास ने ऐसा नहीं किया। उसके मन में परदेसी राजदीप के लिए बहुत अधिक आदर था। वह इस बात पर भरोसा नहीं कर पता था कि राजदीप को कोड़े न लगाने पर कोई अनिष्ट होगा। फिर भी उसने इस बात की जाँच करनी चाही कि राजदीप को न मारने पर कौन-सा अनिष्ट होगा और अनिष्ट होगा भी या नहीं।

उस रात शतनंदन गाँव के दोनों बुजुर्ग मुखियों ने श्रीनिवास के खेत में धान के एक ढेर में आग लगा दी। दूसरे दिन अपना सिर पीटते

धान के ढेर को जलाया है। आप तुरन्त श्रीनिवास के नुकसान को भर दीजिए, वरना आपको दुगने नुकसान को सहन करना पड़ेगा।"

"क्या तुम हमें धमकी देना चाहते हो? बताओ, हमारा कौन-सा नुक़सान होनेवाला है?" रामधन् ने आँखें तरेरकर पूछा।

"आज धान का एक बोरा, कल से हर रोज़ धान का एक ढेर-यही नुकसान आपको भुगतना पड़ेगा।" परदेसी ने कहा।

उस रात उन बुजुर्गों के घरों के बीच की चौपाल में रखा धान का एक बोरा जलकर भस्म होगया। आश्चर्य तो इस बात का था कि उस बोरे की आग की लपटें चारों तरफ़ के बोरों एवं अन्य सामग्री में नहीं लगी।

यह देख गाँव के दोनों मुखिये राजदीप के घर पहुँचे और धमकी भरे स्वर में पूछा, "सच-सच बताओ, तुम कौन हो?"

"मैं कोई भी हूँ, आपसे क्या मतलब? पर मैं किसी को हानि नहीं पहुँचाता! आप दोनों अपना प्रभुत्व बनाये रखना चाहते हैं। आपको अपने पद से इतना अधिक मोह है कि आपमें अच्छे-बुरे का विवेक भी नहीं रहा। पर मैं कह ही चुका हूँ कि मैं आपके अधिकार में बाधा नहीं पहुँचाऊँगा। पर साथ ही, यदि मैं किसी की मदद करना चाहता हूँ तो आप मुझे नहीं रोकेंगें। इसके अलावा आप किसी को हानि भी नहीं पहुँचायेंगे।" राजदीप ने कहा।

"तो बताओ, अब हमें क्या करना है?"

हुए श्रीनिवास गाँव के मुखियों के पास पहुँचा।

उन्होंने श्रीनिवास के मुख से सारा वृत्तान्त सुना, फिर समझा कर कहा, "श्रीनिवास, तुमने हमारी आज्ञा का पालन नहीं किया, उसी का फल है यह! यदि तुम राजदीप को बीस कोड़े लगा देते तो यह घटना न घटती।"

यह बात सारे गाँव में फैल गयी। तब सारे ग्रामवासी बुजुर्गों के घर पहुँचे और बोले, "श्रीनिवास की तरह यदि हमने भी कोई गलती की हो तो आप हमें माफ़ कर दीजिएगा। भविष्य में आप जो भी हमसे कहेंगे, हम करेंगे।"

यह समाचार सुनकर राजदीप गाँव के बुजुर्ग मुखियों के पास पहुँचा और उन्हें चेतावनी देकर बोला, "महाशयो, यह तो बहुत बड़ा अन्याय है। मैं जानता हूँ कि आप दोनों ने ही श्रीनिवास के

श्यामधन ने पूछा ।

"आप लोग श्रीनिवास के पास जाकर कहिये कि वह मुझे बीस कोड़े लगाये । इस बीच एक धान का ढेर उसके खेत में डलवा दीजिए। वह काम गुप्त रूप से होना चाहिए। ऐसा करने पर श्रीनिवास को जो नुक़सान आपने पहुँचाया है, वह पूरा हो जायेगा । साथ ही गाँव के बुजुर्ग बनकर रह रहे आप दोनों का यश बढ़ेगा । मुझे अपनी मार की चिंता नहीं है । चिंता है तो एक ही कि गाँववाले सुखी रहें ।" राजदीप ने सलाह दी ।

बुजुर्गों ने राजदीप का कहना मान लिया । राजदीप ने बीस कोडों की मार खायी । और उसी रात दोनों बुजुर्ग धान के कुछ बोरे गाड़ी पर लादकर श्रीनिवास के खेत में उड़ेल आये । धान का उतना ही बड़ा ढेर उन्होंने लगा दिया, जितना उन्होंने जलाया था ।

दूसरे दिन गाँव वालों को इन सारी बातों पर फिर बड़ा आश्चर्य हुआ ? वे समझ नहीं पारहे थे कि परदेशी राजदीप कौन है ? वह जनता की मदद क्यों करता है ? मार खाकर भी उस गाँव में क्यों रहना चाहता है ? कुछ भी हो, श्रीनिवास वाली घटना से बुजुर्गों का प्रभाव फिर से क़ायम होगया । गाँव वाले उनका विश्वास और भी अधिक करने लगे । रामधन और श्यामधन तो बस चाहते ही यही थे ।

शुरू में जय और विजय ने परदेशी राजदीप पर विशेष ध्यान नहीं दिया था । इसका एक कारण यह भी था कि उनके पिताओं ने उन्हें डरा दिया था और इस बात की चेतावनी दी थी कि

राजदीप को छेड़ना ख़तरे से ख़ाली नहीं है, इसलिए वे उससे दूर ही रहें । राजदीप को आये काफ़ी दिन बीत गये थे पर अभी तक उसके और जय विजय के बीच कोई बात नहीं हुई थी ।

पर एक दिन यह विचित्र घटना घटी । जय और विजय पनघट पर पानी भरने आयी एक युवती कमला से हँसी-मज़ाक कर उसे तंग करने लगे । दोनों ने उसके हाथ का घड़ा खींच लिया और फिर उससे बोले, "अगर तुम सामनेवाले आम के पेड़ पर चढ़कर हमें दो आम तोड़कर दे दोगी, तो हम तुम्हें घड़ा वापस कर देंगे । वरना तुम्हारा घड़ा नदी में फेंक देंगे और वापस घर नहीं जाने देंगे ।"

कमला की समझ में नहीं आया कि वह क्या

करे ? वह भयभीत और चकित खड़ी रह गयी। इतने में उस तरफ़ राजदीप आ निकला। उसने कमला के मुँह से सारा वृत्तान्त जान लिया, फिर जय-विजय को समझाकर कहा, "तुम्हें आम ही चाहिए न मैं तुम्हें तोड़ कर दे दूँगा। तुम कमला को उसका घड़ा वापस कर दो!"

"पहले हमें आम तोड़कर दो, तब हम इसे छोड़ेंगे।" जय विजय ने अपनी शर्त रखी।

वास्तव में यह आम का मौसम नहीं था। उस पेड़ पर एक भी फल नहीं था, इसलिए उन दोनों ने सोचा कि राजदीप फल कहाँ से लायेगा ? पर राजदीप बड़ी आसानी से पेड़ पर चढ़ गया और आठ आम तोड़कर ले आया। वे आम उसने जय विजय को सौंप दिये।

जय विजय की बुद्धि चकरा गयी। उन्होंने पूछा, "यह तो आम का मौसम नहीं है, पेड़ पर एक भी आम नहीं था, फिर तुम इतने बढ़िया पके हुए आम कहाँ से लाये ?"

"जब कोई मनुष्य बिना किसी स्वार्थ के किसी की सहायता करना चाहता है तो ऐसी हालत में किसी भी पेड़ से माँगो, फल अवश्य दे देगा और किसी भी टीले से माँगो, रत्न दे देगा।" राजदीप ने कहा।

"तब तो तुम हमें किसी टीले से माँगकर रत्न दे दो!" विजय मुँह में पानी भरकर बोला।

"मैंने तुम्हें फल दिये, यही बहुत है। मैं तुम लोगों को रत्न नहीं दूँगा। पहले कमला बहन को यहाँ से जाने दो!" राजदीप ने कहा।

जय विजय नहीं माने, बल्कि रत्न पाने की हठ करते रहे।

तब राजदीप ने कमला से कहा, "बहन, ये दोनों तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ सकते। तुम अपना घड़ा लेकर घर जाओ!"

कमला ने अपना घड़ा उठाया और घर की ओर चल पड़ी। जय और विजय ने उसे रोकना चाहा, पर उनके हाथ-पैर नहीं हिले। जब कमला उनकी आँखों से ओझल होगयी, तब वह अदृश्य बंधन खुल गया और उनके हाथ-पैर चलने लगे और उनका मुँह खुला।

"क्या तुम मांत्रिक हो ?" जय ने राजदीप से पूछा।

मैं एक ही मंत्र जानता हूँ। वह है उत्तम

व्यवहार ।" राजदीप ने बेझिझक उत्तर दिया ।

"हमारे रागरंग में तुम रोड़ा बन गये । क्या यही उत्तम व्यक्ति का लक्षण है ?"विजय ने क्रोध में भरकर पूछा ।

"अगर तुम लोग दूसरों को सताना छोड़ दोगे तो मैं भी तुम्हारे रास्ते का रोड़ा बनना छोड़ दूँगा । भविष्य में अगर कभी तुमने किसी को कष्ट पहुँचाने की कोशिश की तो याद रखना, तुम्हारे हाथ-पैर काम नहीं देंगे । तुम्हारी जुबान भी बंद हो जायेगी ।" इसप्रकार चेतावनी देकर राजदीप वहाँ से चला गया ।

इसके बाद भी कई घटनाएँ हुईं, पर जय-विजय कुछ कर नहीं सके । उसके लिए राजदीप की वाणी सत्य प्रमाणित हुई । उन्होंने ग्रामवासियों को सताना बंद कर दिया । पर उन्होंने अपने पिताओं से शिकायत लगायी कि राजदीप ने उनके मन बहलाव के सारे रास्ते बंद कर दिये हैं । पर दोनों बुजुर्ग रामधन और श्यामधन ने उनकी बात पर कोई ध्यान नहीं दिया । उलटे उन्होंने यही सोचा कि यदि इसी बहाने जय विजय उलटे काम करना छोड़ दें तो ग्रामवासी उनका और भी अधिक आदर करने लगेंगे ।

अब जय विजय के मन में ईर्ष्या ने घर कर लिया । वे राजदीप से जलने लगे । एक दिन जब राजदीप गहरी नींद सो रहा था तो उन्होंने उसे रस्सी से बांधकर नदी में फेंक देने की योजना बनायी । पर जब वे रस्सियाँ लेकर राजदीप के घर पहुँचे, तब उन रस्सियों ने उन्हें ही लपेट लिया । उनकी कराह से राजदीप की आँखें खुल गयीं ।

राजदीप को जय विजय की दशा पर तरस आगया । इसने उनके बन्धन खोल दिये और समझाया, "मुझे धोखा देकर जो मुझे सताने की कोशिश करते हैं, वे स्वयं कष्ट के भागी हो जाते हैं । मेरी स्वीकृति के बिना कोई मुझे कष्ट नहीं पहुँचा सकता ।"

जय विजय वहाँ से छूटकर चुपचाप चले गये । पर उनके मन का द्वेष और गहरा होगया और वे राजदीप का अन्त करने का विचार करने लगे ।

(करमशः)

पंचांग शास्त्री

एक घने जंगल में सात डाकू रहते थे। सदा की भांति वे उस दिन भी चोरी करने जा रहे थे कि रास्ते में उनकी भेंट पंचांग शास्त्री से होगयी। चिकनी घुटी हुई खोपड़ी के बीच में छोटी-सी चोटी, सारे बदन पर भभूत की रेखाएँ, हाथ में लोटा, बगल में पंखा और दूसरे हाथ में पंचांग-यही शास्त्री की रूप रेखा थी।

शास्त्री जी को देखकर डाकुओं को हँसी आगयी। शास्त्री ने उनकी तरफ बड़े ग़ौर से देखा और वह समझ गया की ये लूटमारी का धंधा करनेवाले चोर-डाकू हैं। अपने को डाकुओं के हाथों में फँसा देखकर शास्त्री सोच में पड़ गया। अगर ये लोग उसकी चोटी खींच लें, हाथ का लोटा और कंधे का अंगोछा छीन लें, तो वह क्या कर सकता है?

ऐसे विपदकाल में शास्त्री को एक बढ़िया उपाय सूझा। उसने डाकुओं को अपने निकट बुलाकर कहा, "मेरे भाइयो, अगर तुम लोग-मुहूर्त एवं शगुन विचारे बिना डाका डालने निकलोगे तो तुम्हें बड़ा नुकसान उठाना पड़ेगा। मैं पंचांग देखकर तुम लोगों के लिए मुहूर्त शोध दिया करूँगा, इससे तुम्हारा कभी नुक़सान नहीं होगा। न तो कभी पकड़े जाओगे और न कभी ख़ाली हाथ लौटोगे। खूब धन पाकर तुम मज़े से अपने दिन बिताना।"

शास्त्री की बात सुनकर डाकुओं की खुशी का ठिकाना न रहा। सबने एक स्वर में कहा, "पंडित जी, इससे बढ़कर हमें और क्या चाहिए? हम आपके कहे अनुसार ही कार्य किया करेंगे। आप अभी पंचांग देखकर मुहूर्त निकाल दीजिए!"

उस दिन से शास्त्री पंचांग देखकर मुहूर्त निकालने लगा। डाकू शुभ शगुन में ही डाका डालने जाते। इस प्रकार वे काफ़ी धन कमाने लगे। डाकू शास्त्री को इस उपकार के बदले में अपने

२५ वर्ष पूर्व 'चन्दामामा' में प्रकाशित कहानी

लूटे हुए धन में से दस सिक्के गुरुदक्षिणा के रूप में दे देते। इसके साथ ही वे लोग शास्त्री का बहुत मान-सम्मान भी करते। अब शास्त्री का नाम पंचांग शास्त्री ही पड़ गया था।

थोड़े दिन इसी प्रकार बीत गया। धन पाकर शास्त्री के मन में लालच पैदा होगया। वह अपने मन में सोचने लगा कि डाकुओं के दिये हुए धन से उसकी समस्या सुलझनेवाली नहीं है। इससे अच्छा तो यह होगा कि डाकुओं के साथ डाके में शामिल हुआ जाये और तब अपना पूरा हिस्सा लिया जाये। उस धन के संग्रह से कुछ दिन बाद बेटी की शादी हो सकती है।

शास्त्री ने अपना विचार डाकुओं को बता कर कहा, "भाइयो, मैं भी तुम्हारे साथ डाके में शामिल हुआ करूँगा। तुम मुझे अपने दल में सम्मिलित करके मुझे मेरा पूरा हिस्सा दे दिया करना।"

"पंडितजी, आप यह क्या कह रहे हैं? आप हमारे साथ चलकर इतना कष्ट क्यों उठायेंगे? आप चाहें तो हम आपको एक हज़ार सिक्के लाकर देंदेंगे। आप अपनी बेटी का विवाह खूब ठाठ से कीजिएगा।" डाकुओं ने शास्त्री से कहा।

शास्त्री ने उसी समय पंचांग शोधकर मुस्कराते हुए कहा, "कल एकादशी का मुहूर्त बहुत ही शुभ है। इस बार उत्तर की दिशा में लाभ ही लाभ है। डाके की तैयारी करो! मैं भी तुम्हारे साथ चलूँगा।"

"पंडितजी, आप जानबूझकर क्यों आफ़त मोल लेना चाहते हैं? हमारा काम जोखिम से भरा है। आप जो भी धन चाहते हैं, हम लाकर आपके चरणों में रख देंगे।" डाकुओं ने अनेक प्रकार से शास्त्री को समझाया, पर शास्त्री ने उनकी एक न सुनी और उनके साथ चल दिया।
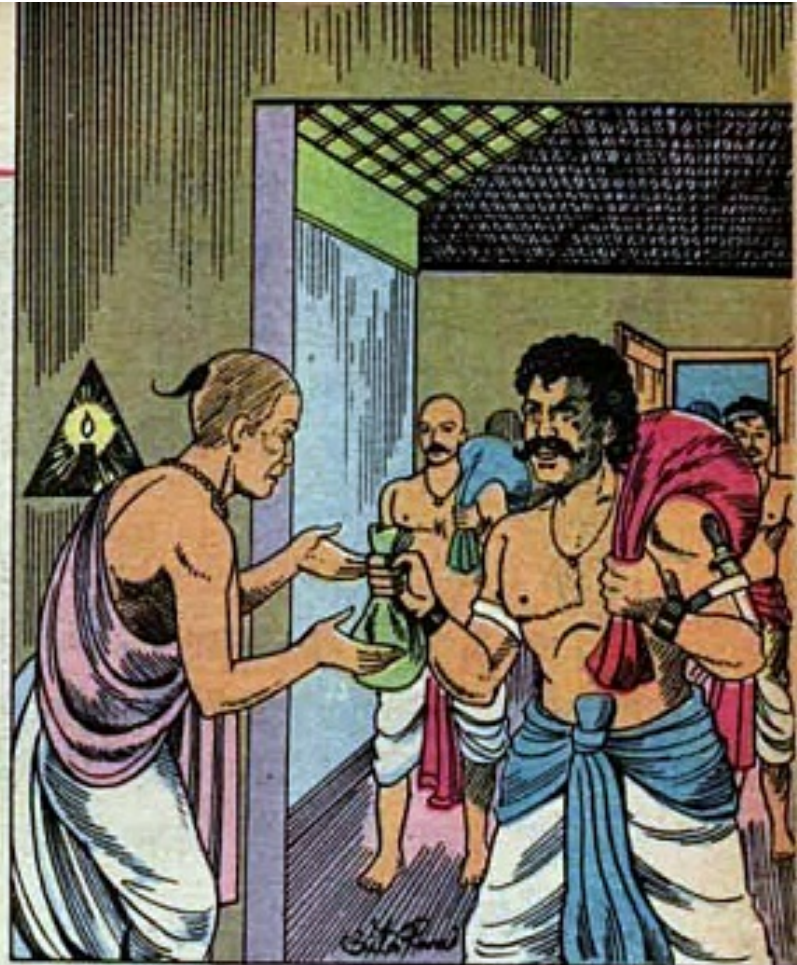
पूर्व योजना के अनुसार दूसरे दिन चांदनी रात में शास्त्री के सहित कुल आठ आदमी चोरी करने के लिए उत्तरी दिशा में चल पड़े। वे एक गाँव में पहुँचे और वहाँ के सबसे बड़े धनवान रंगनाथ के घर में घुस गये।

एकादशी होने के कारण उस घर के सभी लोगों ने उपवास रखा था। दूसरे दिन द्वादशी का पारायण था। सुबह को जल्दी भोजन तैयार हो सके, इसलिए रसोई में आवश्यक खाद्य सामग्री

तैयार करके रखी हुई थी। तरकारियां काटकर रखी हुई थीं-बाकी सब भी चुना बीना रखा था। घर के सभी लोग सोये हुए थे। डाकुओं ने सारा घर छाना और दस हज़ार मूल्य की वस्तुएँ चोरी कर लीं। आभूषणों के साथ पर्याप्त मात्रा में नग़दी भी चुरा ली।

अंत में वे रसोईघर में पहुँचे। वहाँ जाकर देखते क्या हैं, पंचांग शास्त्री नहा-धोकर भोजन बनाने में लगा हुआ है। डाकुओं को रसोईघर में प्रवेश करते देख शास्त्री चिल्ला उठा - "अरे, मेरा चौका अपवित्र हो जायेगा, रसोईघर में क़दम न रखना!"

"पंडितजी, अब हमें एक पल के लिए भी यहाँ नहीं रहना है। अब रुकना ख़तरे की घंटी बजाना है। जल्दी चलिये!" डाकुओं ने शास्त्री से कहा।

"भाइयो, तुम लोग जल्दी क्यों मचाते हो? चार-पाँच मिनट में रसोई बन जायेगी। हम सब आराम से एक साथ खाना खाकर यहाँ से चल पड़ेंगे।" यह कहकर शास्त्री पत्तल ढूंढ़ने में लग गया।

वह चौपाल में पहुँचा तो उसे भगवान का मंदिर दिखाई दिया। उसने सोचा, इतना सब करने के बाद अगर भगवान को नैवेद्य चढ़ाये बिना भोजन किया तो बड़ा पाप लगेगा। यह विचार कर उसने भगवान की पूजा-अर्चना प्रारंभ कर दी और भजन गाते हुए घंटी बजाने लगा। घंटी की आवाज़ सुनकर उस परिवार के सब लोग चौंककर जाग उठे।

घर के लोगों को देख शास्त्री घबरा गया और मुँह बाये उनकी ओर ताकता रह गया। उस घर के मालिक रंगनाथ ने शास्त्री से पूछा, "तुम कौन हो? यहाँ पर किसलिए आये हो?"

पंचांग शास्त्री भयभीत होगया और उसने सारा हाल सच-सच बात लिया। रंगनाथ को उस पर दया आगयी। उसने कहा, "अरे बावरे ब्राहम्ण, यह तुमने क्या किया?" उसने उसे दस सिक्के देकर विदा किया। उधर डाकू भी भाग नहीं सके। सबने उन्हें रंगे हाथ पकड़ लिया और गाँव वालों की मदद से कारागार में भिजवा दिया।

प्रकृति के आश्चर्य

बर्राकूड़ा

समुद्र में रहनेवाला बर्राकूड़ा एक अत्यन्त ख़तरनाक जलचर है। पर यह छोटे-छोटे कीड़ों को अपने शक्तिशाली दांतों के बीच में घुसने देता है और उन्हें कीटाणुओं को पकड़कर खाने का अवसर प्रदान करता है।

कठफोड़वा

कठफोड़वा की जीभ लंबी एवं नुकीली होती है। इसके सिर में मज़बूत हड्डियां एवं फैलनेवाली मांसपेशियां होती हैं। उनके बीच उसकी जीभ लिपटी हुई रहती है। आवश्यकता पड़ने पर कठफोड़वा अपनी जीभ को शीघ्रता से फैलाकर कीड़ों को पकड़ लेता है।
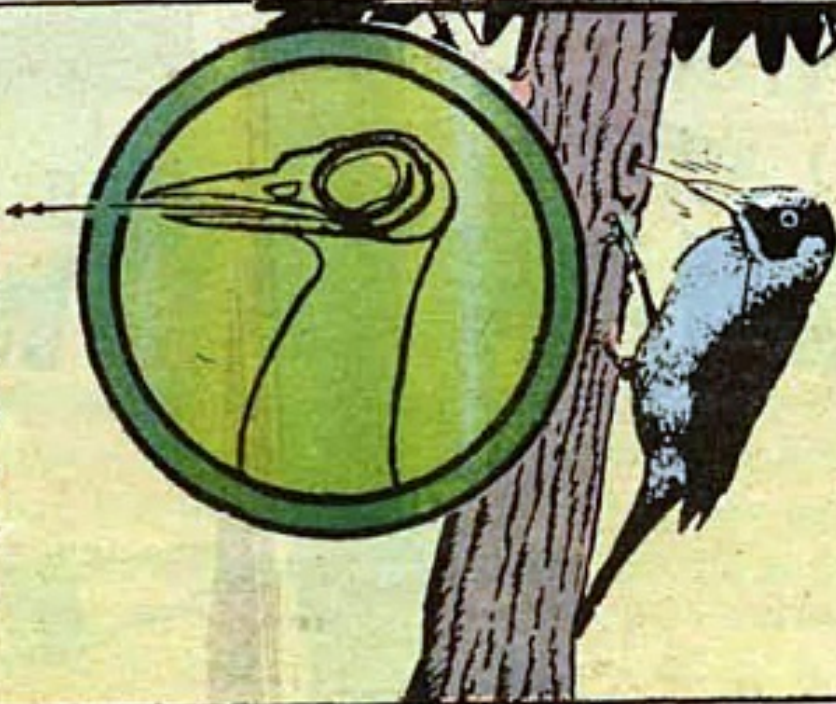
अजीब केकड़ा
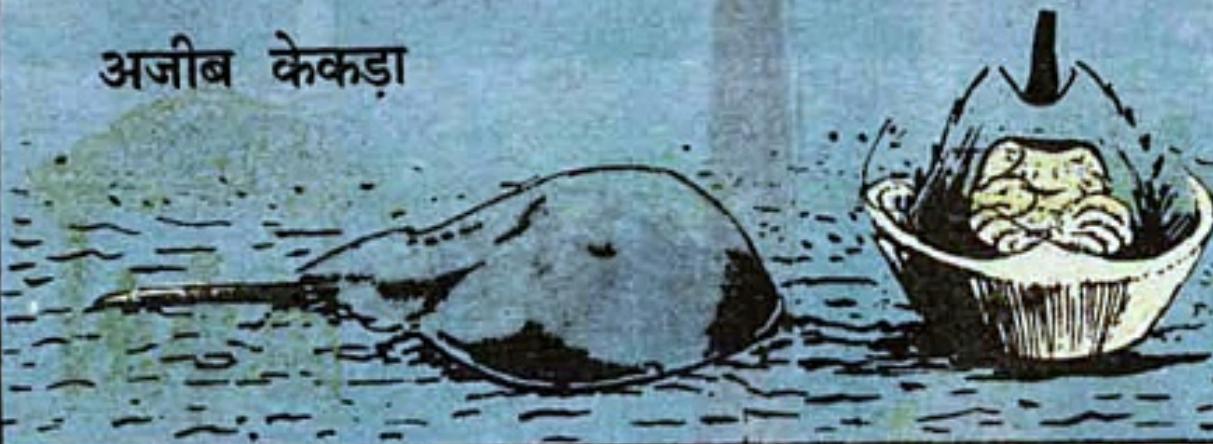
हार्स पूक्राब नाम से पुकारा जानेवाला केकड़ा वास्तव में केकड़ा जाति का नहीं है। यह लगभग ३५० मिलियन वर्ष पूर्व विकसित बिच्छू जाति का एक जानवर है।

Sandak

EVEN THRICE A YEAR.

WITH LOVE

WE WANT SANDAK

SANDAK everytime

Mothers love Sandak, because Sandak is made from pure Chemilon*. Safe, affordable, versatile, durable Chemilon. And because children love Sandak, too!

Sandak

For all times

* Registered Trademark

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार ५०)

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ अगस्त १९८७ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी।

V. Muthuraman

V. Rajamani

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ एक शब्द या छोटे वाक्य में हों। ★ जून १० तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए। ★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) ५० रु. का पुरस्कार दिया जाएगा। ★ दोनों परिचयोक्तियाँ केवल कार्ड पर लिखकर निम्न पते पर भेजें: चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६

अप्रैल के फोटो - परिणाम

प्रथम फोटो: आरोहण!

द्वितीय फोटो: भ्रमण!!

प्रेषिका: बेबी ममता, द्वारा श्री पूर्णचन्द पटेल, मु. पो. मानिकपुर, जि. रायगढ़, ४९६५५१

चन्दामामा

भारत में वार्षिक चन्दा: रु. ३०-००

चन्दा भेजने का पता:

डॉल्टन एजेन्सीस, चन्दामामा बिल्डिंग्स, वडपलनी, मद्रास-६०० ०२६

अन्य देशों के चन्दे सम्बन्धी विवरण के लिए निम्न पते पर लिखिये:

चन्दामामा पब्लिकेशन्स, चन्दामामा बिल्डिंग्स, वडपलनी, मद्रास-६०० ०२६

Printed by B.V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., 188 N.S.K. Salai, Madras 600 026 (India) and Published by B. VISHWANATHA REDDI on behalf of CHANDAMAMA PUBLICATIONS, Chandamama Buildings, Vadapalani, Madras 600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.